हमारे व्रत और त्योहार

लेखिका

स्व० चन्द्रकला भार्गव

प्रकाशक

रवीन्द्र भार्गव

प्रभु निवास, विजयनगर, लखनऊ–२२६००४

प्रथम संस्करण : १९६४
संशोधित षष्टम् संस्करण : २००१
छठी बार पुनर्मुद्रण : २०१४

मूल्य : २० रुपये

मुद्रक :
हिन्दुस्तानी बुक डिपो
प्रभु निवास, विजयनगर,
गुरुद्वारा रोड, लखनऊ–226004
फोन : 0522-4037600

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक के लेखन का अभिप्राय अपने हिन्दू धर्म में प्रचलित अनेक, व्रतों और त्योहारों के विषय में जानकारी कराना है। आजकल पुरुषों में एक प्रकार की भ्रान्ति फैली हुई है और वे यह मान बैठे हैं कि त्योहारों और व्रतों से संबंध अधिकांशतः स्त्रियों का ही होना चाहिए, पुरुषों को इन सबकी चिंता करने की आवश्यकता नहीं; पर यह सही नहीं है। व्रतों और त्योहारों का लगाव स्त्री–पुरुष सभी से है और यथाशक्ति सभी को इनका पालन करना चाहिए। हमारे महर्षियों ने बताया है कि स्त्री जाति पति–सेवा करके ही धर्म तथा मोक्ष और स्वर्ग की अधिकारिणी होती है। अतः पुरुषों को भी व्रत में संलग्न होने का प्रयास करना आवश्यक है।

व्रत से अनेक लाभ हैं – यह तो सभी डॉक्टर तथा वैद्य मानते हैं कि व्रतों को विधान व नियमपूर्वक करने से अनेक प्रकार के रोग, जैसे – अरुचि, अजीर्ण, उदरशूल, वायुशूल, सिर–दर्द, नेत्र–रोग, उपदंश, सूजाक, बवासीर, जलंधर, फीलपाँव, तपेदिक, मलेरिया आदि भयंकर रोग भी यथोचित नष्ट हो जाते हैं। व्रत के प्रभाव से आत्मा शुद्ध होती है, संकल्प शक्ति में वृद्धि होती है और हृदय में भक्तिभावना का संचार होता है।

वर्ष–भर के जिन व्रतों की रचना ऋषि–मुनियों ने की है, उनमें से कोई न कोई व्रत प्रत्येक मनुष्य को नियमपूर्वक अवश्य करना चाहिए। व्रतों के लिए कुछ नियम निर्धारित कर दिये गये हैं। व्रत करने के पूर्व इन नियमों का अध्ययन अवश्य कर लेना चाहिए तथा उनका पालन करना चाहिए। हिन्दू धर्मानुसार मास में कम–से–कम १ या २ बार व्रत कर लेना (अर्थात् एक समय का उपवास हो जाये) आवश्यक है।

भारतीय समाज में व्रत और त्योहारों की परम्परा बहुत पुरानी है। इसका प्रचलन कब तथा कैसे हुआ, इसका इतिहास खोज पाना सरल कार्य नहीं है। फिर भी पुराणों एवं पुराने लोगों द्वारा बतायी गयी कथाओं के आधार पर विभिन्न व्रतों व त्योहारों की जो कुछ भी जानकारी प्राप्त हुई है, यहाँ उसे देने का प्रयास किया गया है।

वैसे तो प्रत्येक जाति के व्रत और त्योहार उसके इतिहास और परम्पराओं के परिचायक होते हैं। किसी भी जाति के त्योहारों को देखकर हम अन्दाज लगा सकते

हैं कि इस जाति में कितना ओज और शौर्य है। त्योहारों का समृद्धिशीलता से अधिक सम्बन्ध है। त्योहार मनाने में हम उमंग और आनन्द का अनुभव करते हैं तथा इनसे हमें अपनी ऐतिहासिक–पुरातन स्मृति का पुनः अवलोकन होता है। हमारे पूर्वजों ने चरित्र–निर्माण, कौटुम्बिक स्नेह, संगठन एवं सेवा भावना जैसे गुणों का विकास उत्सवों और त्योहारों द्वारा किया है।

हमारी जाति में बहुत से त्योहार और पर्व मनाये जाते हैं। कुछ त्योहार वैज्ञानिक होने के साथ–साथ रहस्यपूर्ण भी हैं। कुछ ऐसे भी हैं जिनके सम्बन्ध में जानकारी नहीं है, केवल परम्परागत रूप में उनका समाज में प्रचलन है। पूर्वज करते आये हैं, इसलिए हम भी करते जा रहे हैं। यदि हम विचार करें, समझें और ध्यानपूर्वक सोचें, तो इन त्योहारों के महत्त्व और गंभीरता का आभास होगा। नेह–नाते निभाने पर हमारे पूर्वजों ने बहुत ध्यान दिया और हमारे त्योहार इसी प्रेरणा से ओतप्रोत हैं। सम्बन्धों को प्रगाढ़ करने और परस्पर स्नेह–बंधनों को सुदृढ़ करने में ये भरे–पूरे हैं। प्रायः त्योहार और व्रत निम्न कारणों अथवा उद्देश्यों से मनाये जाते हैं :–

१. नवीन अन्न आने पर (अग्नि में हवन करके)।
२. देवताओं की पूजा में (भोग लगाकर)।
३. पूर्व पुरुषों की यादगार में।
४. पति की दीर्घायु के निमित्त।
५. बहन–भाई के प्रेम भाव में।
६. मनोरंजन के लिए।
७. पुत्र की शुभ कामना के लिए।
८. बुजुर्गों के सम्मान के लिए।

व्रत के नियम

१. व्रत के दिन निश्छल भाव रखना, सत्य बोलना और जागरण करना चाहिए। असमय भोजन तथा शयन नहीं करना चाहिए।
२. इस दिन कलह, झगड़ा व किसी से वैर न करना चाहिए। शान्त मन से दिन व्यतीत करना चाहिए।

३. स्वतंत्र व्रत— जैसे रामनवमी, जन्माष्टमी, बावन द्वादशी, नरसिंह चौदस, पूर्णिमा आदि व्रतों में से एक–दो व्रत नियमपूर्वक प्रत्येक को करना चाहिए।

४. किसी व्रत को ग्रहण करके अकारण नहीं छोड़ना चाहिए वरन् नियमादि का पालन करते हुए प्रसन्नतापूर्वक व्रत का उद्यापन करना चाहिए।

५. व्रती को बारम्बार पानी पीना, पान–तम्बाकू सेवन करना, झूठ बोलना तथा दिन में सोना, स्त्री–सहवास एवं गरिष्ठ भोजन नहीं करना चाहिए। पराया अन्न खाना तथा निष्प्रयोजन घूमना या अनर्गल सम्भाषण करना वर्जित है। व्रत–काल में गोदुग्ध, दही, घी, मूलकंद, आम, अनार, नारंगी, केला, ककड़ी आदि सात्त्विक पदार्थ का ही सेवन करना उत्तम होता है।

६. केवल एक ही वस्त्र पहनकर पूजन नहीं करना चाहिए और न अधिक वस्त्र ही पहन कर पूजा करनी चाहिए। पूजन–काल में पाजामा–पैण्ट आदि विदेशी लिवास पहनना उचित नहीं है।

७. बिना आचमन किये या हाथ–पैर धोकर कुल्ला किये शरीर–शुद्धि नहीं होती। व्रत–उपवास के दिन दातून, मंजन नहीं करना चाहिए, वरन् उँगली से दाँतों को साफ कर लेना चाहिए। पूजा के पूर्व आचमन करना चाहिए। यदि किसी ऐसे स्थान पर हों जहाँ कि जल सुलभ न हो, तो दाहिने कान को स्पर्श कर लेने से ही शुद्धता प्राप्त हो जाती है। अधोवायु निकल जाय, छींक आ जाय, मूत्र त्याग करना पड़े, हँसी आ जाये या झूठ बोलना पड़े,तो जल–स्पर्श से शुद्धता प्राप्त कर लेनी चाहिए।

८. यदि स्त्री अशौच हो जाय, तो ऐसी स्थिति में व्रत तो करे पर पूजा न करे अथवा पति, पुत्र या पुत्रवधू से करवा दे।

६. उकड़ूँ बैठकर कोई पूजा या संकल्प नहीं करना चाहिए।

ईश्वर पूजा

भगवान की पूजा विधि–विधानपूर्वक करने के निम्न १६ उपचार बताये गये हैं :—

(१) भगवान का आवाहन (२) भगवान को आसन (३) पैर धुलाना (४) अर्घ्य देना (५) आचमन करना (६) स्नान कराना (७) वस्त्र पहनाना

(८) जनेऊ पहनाना (९) चंदन लगाना (१०) तुलसीदल चढ़ाना (११) फूल व फूलमाला चढ़ाना (१२) धूप देना (१३) आरती दीपक दिखाना (१४) भोग–लगाना (१५) पान–सुपारी–लौंग अर्पण करना (१६) कुछ भेंट–दक्षिणा चढ़ाना।

विष्णु और शालिग्राम की प्रतिमा पर चावल नहीं चढ़ाना चाहिए। शिवमूर्ति पर केतकी (केवड़ा) और मालती का फूल नहीं चढ़ाना चाहिए। गणेशमूर्ति पर तुलसी नहीं चढ़ायी जाती, दूब चढ़ायी जाती है। सूर्य की पूजा में अगस्त के फूल तथा बेलपत्र नहीं चढ़ाना चाहिए, विष्णु और शालिग्राम की मूर्ति पर तुलसीदल चढ़ाना चाहिए। तथा भगवान पर चढ़ाने के फूल स्नान करने से पहले ही तोड़ लेने चाहिए।

विष्णु और शालिग्राम की मूर्ति पर तुलसीदल चढ़ाना चाहिए।

शिवमूर्ति पर बेलपत्र डंठल तोड़कर चढ़ाने चाहिए, यदि नित्य बेलपत्र न मिलें, तो एक बार के चढ़ाये बेलपत्र (जल से धोकर) तीन बार तक चढ़ा सकते हैं, सूखे बेलपत्र भी चढ़ाये जा सकते हैं।

दुर्गामूर्ति पर कनेर, गुड़हल, लाल गुलाब के पुष्प चढ़ाना चाहिए।

पार्वतीमूर्ति पर सुगंधित लाल रंग के फूल, सेंदुर, मेंहदी अर्पण करें।

भगवान का ध्यान करना वैसे तो बहुत कठिन है, पर माला लेकर जाप करने से भगवान के नाम का जाप सरलता से हो सकता है। माला रुद्राक्ष, तुलसी या कमलगट्टा की होनी चाहिए। मध्यमा और अनामिका उँगली से अँगूठे की सहायता से माला जपना चाहिए।

षोडशोपचार-पूजाविधि

भगवान का आवाहन करके आसन दें, फिर मंत्रोच्चारण के साथ पूजा आरम्भ करें।

१. ॐ पादयोः पाद्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।

इस मंत्र से भगवान के चरण धोकर अपने मस्तक पर लगायें।

२. ॐ हस्तरोमयं समर्पयामि नारायणाय नमः।

इस मंत्र को बोलकर भगवान के हाथों पर जल डालें।

३. ॐ आचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।

इस मंत्र से आचमन करायें।

४. ॐ गन्धं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से माथे पर चन्दन–रोली का तिलक लगावें।

५. ॐ मुक्ताफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इससे माथे पर मोती लगावें।

६. ॐ पुष्पं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र को बोलकर पुष्प चढ़ावें।

७. ॐ मालां समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से भगवान के गले में माला पहनावें।

८. ॐ धूपमाघ्रापयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से धूप चढ़ावें।

९. ॐ दीपं दर्शयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से घी का दीपक भगवान के सम्मुख जलावें।

१०. ॐ नैवेद्यं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से भगवान का भोग लगावें।

११. ॐ आचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से आचमन करावें।

१२. ॐ ऋतुफलं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से फल चढ़ावें।

१३. ॐ पुनराचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।
इस मंत्र से पुनः आचमन करावें।

१४. ॐ ताम्बूलं पुंगीफलं च समर्पयामि नारायणाय नमः।
पान–सुपारी चढ़ावें।

१५. ॐ पुनराचमनीयं समर्पयामि नारायणाय नमः।
फिर आचमन करावें।

१६. ॐ पुष्पांजलिं समर्पयामि नारायणाय नमः।
अंजली में पुष्प भरकर चढ़ावें।

आरती करके प्रार्थना करें। भजन–कीर्तन श्रद्धापूर्वक करें।

आजकल सभी बहू–बेटियाँ सुशिक्षित हैं, अतः उन्हें संस्कृत भाषा में लिखे मन्त्र बोलकर देवी–देवताओं का पूजन करने का अभ्यास करना चाहिए। संस्कृत

शब्दों का उच्चारण करना यद्यपि कुछ कठिन लगता है, परन्तु इन्हें कंठस्थ कर लेने पर मधुर स्वर में उच्चारण करने से बहुत ही सरल व अच्छा लगता है। इन मंत्रों के पढ़ने से निकली हुई शब्द–लहरी वातावरण को मधुर, रसीला कर देती है, इन्हें सुनने वालों को भी आनन्द का अनुभव होता है और पढ़ने वालों को तो हार्दिक आनन्द मिलता ही है।

इस पुस्तक में जो थोड़े–से मंत्र हैं, आशा है, पाठक बहनें इन्हें अपनाकर देव–पूजा का आनन्द लेंगी और कृतार्थ होंगी। जिन देवी–देवताओं का संबंध हमारे प्रचलित त्योहारों से है, उन्हीं के पूजन के मंत्र नीचे दिये गये हैं :–

सूर्य का ध्यान :–

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैक सिन्धुं।
भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।
पद्मद्वयाभय वरान् दधतः कराब्जैः।
माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम्।
अर्घ्यः ह्रीं हं स इदं दत्तं मयादत्तं गृहाणि दिवाकरः।

गनगौर गौरि का ध्यान :–

हेमाद्रितनयां देविं वरदां शंकरप्रियाम्
लम्बोदरस्य जननीं गौरिमावाह्यामि।

बरगदी अमावस्या प्रार्थना :–

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि।

गंगा दशहरा स्तुति :–

नमो भगवत्यै दशपापहरायै गंगायै नारायण्यै
रैवत्यै शिवायै दक्षायै अमृतायै विश्व सपिण्य
नन्दिन्यै नमो नमः।

हरियालीमावस नारायण ध्यान :–

उद्यदायित्य संकाशं पतिवासं समच्युतम्
शंख–चक्र–गदापाणिं ध्याय लक्ष्मीपतिं हरिम्।

लक्ष्मी ध्यान :–

हस्तद्वयेन कमले धारयन्तीं स्वलीलया
हारनूपुरसंयुक्तां लक्ष्मीं देवि वचिन्तये

शंख–चक्र–गदा–हस्ते शुभ्रवर्णा सुवासिनि
मे देहि वरं लक्ष्मि सर्वसिद्धिप्रदायिनी।

लक्ष्मी प्रार्थना :–

(१) सर्व प्रदर्शे सकलार्थ देत्वं प्रभा सुलावण्य दया प्रदोग्घी
सुवर्ण देत्वं सुमुखि भव श्री हिरण्यमयी मे नयना प्रसन्ना।

(२) समस्त विघ्नौ विनाशकारिणी समस्त भक्तोद्धरणे विचक्षणा
अनन्तसौभाग्यसुखप्रदायिनी हिरण्यमयी मे नयना प्रसन्ना।

(३) देवि प्रसीद दयनीय तमाय मह्यं देवादिनाथ भवदेवगणाभि वन्द्ये
मातास्तथैव भव सन्निहिता छशोमे पत्यासम सुखे भव सुप्रसन्ना।

भादो सप्तमी शिव–पार्वती प्रार्थना :–

सुधासिंधु सारे चिदानन्द नीरे समुत्फुल्लनीये
सुरतरानि तरीये मणि–व्यूह शाले स्थिते।
हेम शाले मनोजारिवामे निशरणम् मनो मे।

करवाचौथ–गौरि का पूजन–ध्यान–प्रार्थना :–

न तातो न माता न बन्धुर्न दाता
न पुत्रो न पुत्री न भृत्यो न भर्ता
न जाया न विद्या न वृत्तिर्ममैव
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेकाभवानि।
प्रजेशं रमेशं महेशं सुरेशं
दिनेशं निशीथेश्वरं न कदाचित्
न जानामि चान्यत सदाहं शरण्ये
गतिस्त्वं गतिस्त्वं त्वमेका भवानि।

गोवर्धन पूजा :–

हे रामा पुरुषोत्तमा नरहरे नारायण केशवा
गोविन्दा गरुणध्वजा गुणनिधे दामोदरा माधवा
हे कृष्ण कमलापते यदुपते सीतापते श्रीपते
वैकुण्ठाधिपते चराचरपते लक्ष्मीपते पाहिमाम्।

देव उठनी एकादशी :–

उशिष मागध मंगल गायनीर
झटिति जागृहि जागृहि

अति कृपार्द्र कटाक्ष निरीक्षणेर
जगदम्ब विदम्ब सुखी कुरु–३।।

संकट चौथ संकटनाशन स्तोत्र :–

प्रणम्य शिरसां देवं गौरीपुत्रविनायकम्
भक्त्या वासा स्मरे नित्यं आयुकामार्थ सिद्धये
प्रथमं वक्रतुण्डं च एकदन्तं द्वितीयकम्
तृतीय कृष्ण पिंगाक्षं गजवक्त्रं चतुर्थकम्
लम्बोदरं पंचमं च षष्ठं विकटमेव च
वृहितं तेजपुञ्जं च वायुमाकाशमेव च
सप्तमं विघ्नराजं च धूम्रवर्णं तथाष्टकम्
नवमं भालचन्द्रं च दशमं तु विनायकम्
एकादशं गणपतिं द्वादशं तु गजाननम्
द्वादशैतानि नामानि त्रिसंध्यं यः पठन्नरः
न च विघ्नभयं तस्य सर्वसिद्धिकरं प्रभो।

शिवरात्रि :–

श्री शिवपंचाक्षर स्तोत्र का पाठ व शिव मानस पूजा करनी चाहिए।

नागेन्द्र हाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय महेश्वराय
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय।

द्वादश ज्योतिर्लिंग स्तोत्र :–

सानन्दमानन्द वने वसन्तं आनन्दकन्दं हृत पापवृन्दम्
वाराणसीनाथमनाथनाथं श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये।

शीतला पूजन :–

शीतला स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

इस छोटी–सी पुस्तिका में यथाशक्ति व्रत, त्योहार–पर्व आदि के विषय में लिखने का प्रयास किया गया है। यदा–कदा प्रचलित कथाएँ भी दी गयी हैं। चित्र आदि भी देने की यथासम्भव चेष्टा की गयी है। आशा है, पाठक बहनें इसे पसन्द करेंगी।

लखनऊ : १९६४

निवेदिका

चन्द्रकला भार्गव

विषयसूची

क्रम	विषय		पृष्ठ
१.	नया संवत् (नवरात्र)	....	१
२.	गनगौर (गणगौर)	....	२
३.	रामनवमी	....	५
४.	बैसाख शुक्ल पक्ष की तीज (अक्षय तीज)	....	५
५.	नरसिंह चौदस	....	५
६.	बरगदी अमावस	....	६
७.	गंगा दशहरा	....	८
८.	निर्जला एकादशी	....	९
९.	बहुला चौथ	....	९
१०.	हरियाली अमावस	....	१०
११.	नागपंचमी	....	११
१२.	हरियाली तीज	....	१२
१३.	रक्षाबंधन	....	१२
१४.	चाँदन छठ	....	१४
१५.	कृष्ण जन्माष्टमी	....	१६
१६.	भादों शुक्ल पक्ष सप्तमी	....	१७
१७.	ओक द्वादशी (गौ वत्स पूजा)	....	१७
१८.	हरितालिका तीज	....	१८
१९.	गणेश चौथ	....	२०
२०.	ऋषि पंचमी	....	२०
२१.	राधा अष्टमी	....	२३
२२.	अनन्त चौदस	....	२३
२३.	पितरपक्ष	....	२५
२४.	शारदीय नवरात्र	....	२५
२५.	दशहरा	....	२६

क्रम विषय		पृष्ठ
२६. करवा चौथ	....	२७
२७. अहोई अष्टमी	....	२६
२८. धनतेरस	....	३०
२६. नरक चौदस	....	३१
३०. दीपावली	....	३२
३१. गोबरधन पूजा (अन्नकूट)	....	३४
३२. भय्या दोयज या यमद्वितीया	....	३४
३३. अक्षय नवमी	....	३८
३४. देव उठनी एकादशी	....	४०
३५. मकर संक्रान्ति	....	४१
३६. गणेश चौथ	....	४६
३७. वसंत पंचमी	....	४८
३८. शिवरात्रि	....	४६
३६. होली	....	५१
४०. धुलेंड़ी	....	५४
४१. बसौड़ा (शीतला अष्टमी)	....	५५
४२. सूर्यदेव की कथा	....	५६
४३. दशारानी की पूजा (दसिया)	....	६२
४४. सत्यनारायण की पूजा, व्रत और कथा	....	६६
४५. एकादशी व्रत	....	६७
४६. पुरुषोत्तम मास-लौंद, मलमास का वर्णन	....	६८
४७. आमला की एकादशी	....	६६
४८. गणेश जी – विनायक की कथा	....	७०
४६. विभिन्न त्योहारों पर प्रयुक्त अलंकरण चित्र	....	७१
५०. जानने योग्य बातें	....	८४

१—नया संवत् (नवरात्र)

भारतवर्ष में नव वर्ष का प्रारम्भ चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा अर्थात् पड़वा से होता है। इसी दिवस को ब्रह्मा जी ने सृष्टि की रचना आरम्भ की थी। इसी दिवस से देवी पूजा आरम्भ होती है जो नवरात्र के रूप में नौ दिन तक मनायी जाती है। नवरात्र में नौ दिन तक व्रत रखा जाता है और एक बार फलाहार किया जाता है। कुछ परिवारों में केवल प्रतिपदा और दुर्गाष्टमी को ही व्रत रखा जाता है।

व्रत रखने की विधि — पूजन स्थान को धोकर अथवा लीपकर शुद्ध कर लेते हैं। पूर्व अथवा पश्चिम की दीवार पर रोली, सिंदूर अथवा हल्दी से देवी जी की स्थापना की जाती है। किसी—किसी परिवार में इस प्रकार का चिह्न अंकित करते हैं। किसी के यहाँ बायें हाथ से हल्दी और दाहिने हाथ के पंजे में घी लगाकर दीवार पर छाप अंकित करते हैं। थोड़े से अनाज के दाने पृथ्वी पर डालकर उस पर कलश की स्थापना करते हैं। कलश ताँबे अथवा मिट्टी का होना चाहिए तथा उसमें पानी भरकर कलश के मुँह पर लाल कपड़े में जटादार नारियल लपेटकर रखते हैं। उसके ऊपर कलावा लपेट देते हैं। कलश की बायीं ओर एक शकोरे में मिट्टी (पिड़ोर) की ६ डली रखकर और लाल कपड़े से ढककर नवदुर्गा की स्थापना की जाती है। दाहिनी ओर ५ या ७ कंकड़ लाल—पीले रंग के कपड़े से ढककर रखते हैं, यह पथवारी कहलाते हैं। दोनों के बीच में एक शकोरे या कटोरी में घी का दीपक लम्बी बत्ती बनाकर जलाया जाता है। उसके नीचे भी अनाज के दाने डाले जाते हैं। घर के स्त्री—पुरुष स्नान करके इसकी स्थापना करते हैं। दुर्गा देवी का आह्वान, स्तवन तथा ध्यान विधिपूर्वक करके, दीपक के समीप जलते हुए कंडे की अग्नि पर घी डालकर, लौ पर फलाहारी हलुआ या बताशा का भोग लगाया जाता है। देवी जी को फूल, सुपारी, लौंग, बताशा और अनार की पत्ती चढ़ाई जाती है और कपूर से आरती की जाती है। शाम को भी ज्योति जलाकर भोग लगाना व आरती करना चाहिए। नौ दिन तक देवी जी का पाठ करना चाहिए। यदि स्वयं न कर सकें तो पंडित से पाठ करवाना चाहिए। एक बड़े शकोरे में या जमीन पर मिट्टी डालकर जौ बोये जाते हैं, जिन्हें प्रतिदिन जल से सींचना चाहिए तथा दशमी के दिन उनका

भी विसर्जन कर देते हैं। अष्टमी के दिन खोये की मिठाई से देवी जी का भोग लगाना चाहिए और हवन करना चाहिए। जायफल का बलिदान दिया जाता है। नवमी को हलुवा, पूरी बनाकर देवी जी का भोग लगाकर ७ कन्याओं तथा २ बटुकों (बालकों) (किसी परिवार में २ कन्याओं और १ बटुक) को खिलाया जाता है। उनके माथे पर हल्दी से बिन्दी लगाकर अथवा तिलक करके दक्षिणा दी जाती है। फिर देवी—विसर्जन होता है। हवन की राख और चढ़े हुए फूल—पत्ते नदी, तालाब या कुएँ में डाल देना चाहिए।

२—गनगौर (गणगौर)

यह त्यौहार सौभाग्यवती स्त्रियाँ करती हैं। हम लोगों के यहाँ चैत्र शुक्ल तीज को गौरी की पूजा की जाती है। भार्गवों के यहाँ पत्थर की बनी गौरी की मूर्ति प्रत्येक परिवार में होती है। यदि किसी के पास पत्थर की बनी मूर्ति न हो, तो सुपारी पर कलावा या लाल रेशम लपेट कर या गोबर की गौर बनाकर पूजा की जा सकती है। मूर्ति को कटोरे में स्थापित करके जल से स्नान कराते हैं। फिर कटोरे से निकालकर धरती पर चौकोर लीपकर उसे स्वच्छ स्थान पर रखते हैं। इन पर रोली, हल्दी, अक्षत, सिन्दूर, गुलाल और मेंहदी चढ़ायी जाती है। इस त्योहार पर 'गुना' नामक पकवान, जो मैदा का मीठा और फीका बनाया जाता है, (जिसे पहले दिन बना लेते हैं) से पूजन किया जाता है। ४ मीठे गुना गौर के चारों कोनों पर चढ़ाये जाते हैं तथा प्रत्येक कोने पर एक—एक मिट्टी की डली भी रखी जाती है। हरी दूब की सोलह डालियाँ, कलावा के तार से बाँधकर बुहारी की आकृति की ४ बुहारियाँ बनायी जाती हैं। दो से हल्दी लगाकर गौर का अर्चन करते हैं और पैर, घुटना तथा मस्तक पर तीन बार लगाकर रख देते हैं। फिर स्त्रियाँ अपने पैर, घुटना तथा माथे पर दो बुहारियों से अर्चन करती हैं। गौर की आरती करके एक थाली में १६ गुना (८ मीठे तथा ८ फीके) रखकर द्रव्यसहित बायना काढ़कर ननद को दिया जाता है।

गणगौर की कथा — एक समय शिव जी ने नारद जी को साथ लेकर तीर्थाटन का विचार किया। पार्वती जी भी साथ चलने का हठ करने लगीं और बहुत मना करने पर भी न मानीं। लाचार होकर उन्हें साथ लेना पड़ा। रास्ते में बीहड़ वन, घने जंगल थे, बड़ा कठिन रास्ता था। चलते—चलते वे एक बस्ती में पहुँचे। वहाँ की स्त्रियों ने शिव—पार्वती के आने का समाचार

पाया, तो वे जल, फूल, फल, जो जिसे मिला, लेकर भेंट पूजा करने आयीं और पार्वती जी से 'सौभाग्यवती हो' का आशीर्वाद पाकर लौट गयीं। धनाढ्य घरों की स्त्रियों ने जब यह समाचार पाया, तो सोलह श्रृंगार कर अनेक व्यंजन सजाकर पूजन करने आयीं। शिव जी ने पूछा – "हे प्रिये ! सुहाग तो तुमने प्रथम आयी स्त्रियों को बाँट दिया, इन्हें क्या दोगी ?" तब पार्वती जी ने ऊँगली चीरकर उस रुधिर से उनके छीटें लगा दिये। किसी पर कम, किसी पर ज्यादा छींटे पड़े; वैसा ही उनके हिस्से में सुहाग आया। जब सब स्त्रियाँ लौट गयीं, तब पार्वती जी कहने लगीं – "इन सबने तो आपका पूजन किया; मेरी भी इच्छा है कि मैं भी पूजन करूँ, पर मेरे पास कुछ सामग्री तो है ही नहीं। आप आज्ञा दें, तो नदी पर स्नान करके मैं भी पूजन करूँ।" आज्ञा पाकर उन्होंने नदी तट पर जाकर स्नान किया। बालू की शिवमूर्ति बनाकर षोडशोपचार से उसका मानसिक पूजन किया। बालू के ही मोदक बनाकर भोग लगाया और बेलपत्र तथा दूब तोड़कर चढ़ायी। विधिवत् पूजन करने में समय अधिक लग गया। जब लौट कर आयीं, तो शिव जी ने पूछा – "इतनी सामग्री एकत्र करके लाने वाली स्त्रियों को भी इतनी देर पूजा करने में नहीं लगी जितनी देर तुमने लगा दी।" पार्वती जी खीज कर बोलीं, "वहाँ मेरे पीहर वाले मिल गये इसी से मैं बैठी रही।" यह था तो व्यंग्य, परन्तु सुनते ही शिव जी उठ खड़े हुए। बोले – "मैं भी अपने ससुराल वालों से मिलूँगा।" नारद जी भी चलने को तैयार हो गये। पार्वती जी असमंजस में पड़ गयीं और घबराकर भगवान का ध्यान कर प्रार्थना करने लगीं – "हे नाथ ! मेरे अपराध को क्षमा करो। मेरी कही हुई असत्य वाणी सत्य हो जाय।" थोड़ी दूर जाने पर बस्ती दिखायी पड़ने लगी। वहाँ एक सुन्दर महल था जहाँ पार्वती जी के सभी कुटुम्बीजन मिले। तीन दिन बड़े आनन्द से बीते। पार्वती जी जब चलने का आग्रह करतीं, तभी शिव जी माला जपने बैठ जाते। पार्वती जी उठकर चल दीं। तब शिव जी को भी चलना पड़ा। जल्दी में उनकी माला वहीं छूट गयी। बहुत दूर जाने पर जब जप करने का समय हुआ, तब शिव जी को माला की याद आयी। वे एक वृक्ष के तले बैठ गये। नारद जी माला लेने गये। नारद जी बहुत देर तक घूमते रहे, पर कहीं न बस्ती मिली, न महल। एक पत्थर पर माला रखी देखकर वे उठाकर चले आये और सारा हाल शिव जी को बताया। खूब हास–परिहास हुआ।

इस दिन चैत्र शुक्ल तीज थी और पार्वती जी ने सभी स्त्रियों को सौभाग्य बाँटा था, अतः तभी से इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियाँ पार्वती जी का पूजन करने लगीं।

नवविवाहित वधुएँ ब्याह वाले वर्ष से ५ या ७ वर्ष तक निम्नलिखित रीति से वसंत पूजन करती हैं :–

गौर का अर्घ्य – गणगण गौर गणगणगौर आगे ईसर पीछे गौर,
चैत्र मास पिछले पाख जो लूमे टेसू फूले,
चकवा–चकवी–खेल करे हैं बीटकड़ी गणगोर करे हैं।

हथेली पर १६ नये जौ, हल्दी रखकर और जौ में हल्दी लगा–लगाकर गौर पर यह कहकर जौ चढ़ाते हैं :–

जौ जाता कृष्ण को भाता, जौ की क्यारी कृष्ण जी को प्यारी।
जौ हरे कृष्ण जी भरे, जौ बाले कृष्ण जी काले।
जौ की रास, कृष्ण जी बैठे रुक्मिणी के पास।

जौ चढ़ाने के बाद यह कहते हैं –

'पूनो नहाई, पड़वा नहाई, दोयज नहाई, तीज नहाई, चौथ को चौरासी नहाई, पाँचे को पाँच भाई की बहन, छठ को छै देवर–भौजाई, सातें को सात पूत की माई, आठें को आठ घड़ा भर लाई, नौमी को मैं नहाई, धोई, पाटे बैठी आय, आये कृष्ण जी पूछे बात – क्या तू नहाई वाली भोली, क्या तू पूजी बाल वसन्त, माँ–बाप लेके नहाई, भाई–भतीजे लेके नहाई, देवर–जेठ लेके नहाई। कहाँ उतारूँ लारी–झारी, भाई–भतीजे–भरी क्यारी, कहाँ उतारूँ लारी–झारी देवर–जेठ भरी क्यारी।"

गणगौर का पूजन – गणगौर पर जल चढ़ाकर गुलाल, मेंहदी, अबीर, हल्दी, चावल इत्यादि चढ़ायें तथा आरती करें।

चाक चढ़ा कुम्हार–घड़ा, कडुआ तेल, कसूमल बाती, गौर आगे दिया बाती जलाकर भी आरती की जाती है। गौर के पैर छूकर पूजा समाप्त करें।

विवाह वाले वर्ष ३२ गुना से बायना काढ़ा जाता है। इसके बाद के वर्षों में प्रत्येक वर्ष १६ गुना से बायना काढ़ा जाता है। ५ या ७ वर्ष तक गणगौर की पूजा की जाती है। इस दिन स्त्रियाँ नमक नहीं खाती हैं। बायने में कछ रुपये भी रखे जाते हैं।

प्रत्येक त्योहार को पूजन के बाद सूर्य की पूजा भी करते हैं तथा विनायक जी की कहानी कही जाती है (देखें पृष्ठ ७१)।

सूर्य पूजा का मंत्र निम्नलिखित है –

ॐ एहि सूर्य सहस्रांसो तेजो राशे जगत्पते।
अनुकम्पय माम् भक्त्या ग्रहणार्घ्य दिवाकर।।

३—रामनवमी

चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी को श्रीरामचन्द्र जी का जन्म हुआ था। जन्म–उत्सव के उपलक्ष्य में भजन, कीर्तन तथा रामायण पाठ करना चाहिए। फल तथा मिष्ठान का भोग लगाना चाहिए। व्रत भी किया जाता है, फलाहार खाते हैं। इसी दिन नवरात्र दुर्गापूजा भी समाप्त होती है।

४—बैसाख शुक्ल पक्ष की तीज (अक्षय–तीज)

यह तीज, निम्न चार उत्सवों के कारण मनायी जाती है। इसी तिथि को (१) नर–नारायण अवतार (२) परशुराम जन्म (३) हयग्रीव अवतार (४) त्रेतायुग का आरम्भ हुआ था। इस तिथि में किया हुआ दान अक्षय होता है। अन्न और जल–दान करना चाहिए। षोडशोपचार से भगवान का पूजन करना चाहिए। नर–नारायण को सत्तू का, परशुराम जी को ककड़ी का और हयग्रीव जी को चने की दाल का भोग लगाया जाता है।

वीरशिरोमणि भार्गववंशभूषण परशुराम जी का जन्म इसी तिथि को हुआ था। सायंकाल को इनका जन्म–उत्सव सामूहिक रूप से मनाना चाहिए।

इस दिन के महत्त्व के विषय में युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से पूछा था, तो कृष्ण जी ने बताया कि इस तिथि को त्रेता युग का आरम्भ हुआ था। यह पुण्य तिथि है। इस दिन स्नान करके दान, जप, तप, तर्पण आदि करना चाहिए।

५—नरसिंह चौदस

यह बैसाख मास के शुक्ल पक्ष में चतुर्दशी को मनायी जाती है। इस दिन नरसिंह भगवान का अवतार हुआ था। षोडशोपचार से संध्या समय, जब सूर्य अस्त हो रहा हो, भगवान की पूजा होती है। अनेक प्रकार के व्यंजन व फलों से भगवान का भोग लगाना चाहिए। कुछ लोग व्रत भी करते हैं। नरसिंह भगवान की कथा कही जाती है (देखिये होली की कथा में)।

६—बरगदी अमावस

यह ज्येष्ठ मास के कृष्ण पक्ष अमावस्या को होती है। इस दिन बरगद के वृक्ष का पूजन करते हैं। हम लोगों (भार्गवों) के यहाँ बरगद और पीपल दोनों की पूजा होती है। अपनी सुविधा के लिए दोनों पेड़ों की डाली मँगाकर, उन्हें कच्चे सूत से लपेटकर, एक गहरे बर्तन (परात) में रखते हैं। फिर अनामिका ऊँगली में हल्दी–चावल लगाकर २४ बार जल चढ़ाया जाता है। मेंहदी व सिंदूर से तिलक करके कच्चे आटे के बने २४ फल पत्ते पर रखकर चढ़ाये जाते हैं। कच्चे आटे के दो गोले भी बनाकर चढ़ाते हैं। (पहले दिन सौभाग्यवती स्त्रियाँ सिर–सहित स्नान करके मेंहदी लगाती हैं। सिर गूँथकर नया कलावा डालती हैं। बायना काढ़ने के लिए फल बनाकर पहले दिन रख लेती हैं।) कुछ द्रव्य (रुपये) रखकर १४ फल से बायना काढ़ती हैं। पीपल के नरम पत्ते में, हाथ–पैर की छुड़ाई हुई थोड़ी–सी मेंहदी रखकर, कलावा से लपेटकर चूड़ी के बीच में रखती हैं। एक पत्ते में सिंदूर रखकर सिर के बालों में रखा जाता है। पूजन के बाद आरती की जाती है। स्त्रियाँ वरदान माँगती हैं कि सावित्री के समान हम भी सौभाग्यवती रहें। यदि सम्भव हो, तो बरगद–पूजन के समय बरगद के वृक्ष के नीचे बैठकर यह प्रार्थना करनी चाहिए –

जगत्पूज्ये, जगन्मातः सावित्री पतिदैवते।
पत्या सहावियोगं मे वटस्थे कुरुते नमः।।

कथा – अश्वपति नामक एक राजा थे। उनके कोई संतान नहीं थी। उन्होंने संतान की इच्छा से सावित्री देवी की अराधना की। देवी प्रसन्न हुईं और एक कन्या होने का वरदान दिया। यथासमय कन्या उत्पन्न हुई, उसका नाम सावित्री रखा गया। वह रंग–रूप में देवी जी के समान थी। बड़ी हुई तो राजा को उसके ब्याह की चिन्ता हुई पर उसके योग्य कोई वर जँचता ही नहीं था। विवश हो उन्होंने कन्या को स्वयं वर ढूँढ़ने के लिए वृद्ध मंत्रीजनों के साथ रथ में बैठाकर देश–देशान्तरों में भेजा। घूमते–घूमते वह एक सुहावने वन में पहुँची। उसी वन में राजा द्युमत्सेन राजपाठ छिन जाने के कारण रानी और पुत्र के साथ रहते थे। उसके पुत्र का नाम सत्यवान् था। सावित्री ने उसे पति रूप में चुना। मंत्रियों से कहा, अब लौट चलो। घर आकर उसने माता–पिता से अपनी इच्छा प्रकट की।

संयोगवश उसी दिन नारद जी उधर आ निकले। राजा ने पुत्री के वर चुनने का समाचार उन्हें कह सुनाया। नारद जी ने कहा – ''सत्यवान् सब प्रकार सावित्री के योग्य तो है, पर उसकी आयु केवल एक साल ही शेष है। उससे विवाह नहीं करना चाहिए।'' सावित्री ने कहा, ''आर्य नारियाँ एक ही बार पति का वरण करती हैं। मैं तो उन्हें वर चुकी हूँ।'' अतएव राजा और रानी सावित्री को साथ लेकर वन को गये और सत्यवान् के साथ उसका विवाह कर दिया। सावित्री पतिगृह में रहकर अंधे सास–ससुर और पति की सेवा करने लगीं; पर नारद जी की कही बात उसे सदा खटकती रहती थी। पीपल के वृक्ष के नीचे उनकी कुटी थी, वहीं पर बरगद का पेड़ भी था। नित्य दिनों की गणना करने के विचार से अपनी माँग में सिंदूर लगाते समय वह नियमपूर्वक एक रेखा बरगद के वृक्ष में भी लगा देती थीं। जब वर्ष समाप्त होने में तीन दिन बाकी रहे, तब व्रत रखकर भगवान से पति की दीर्घ आयु के लिए प्रार्थना करने लगीं। वर्ष समाप्त होने का दिन भी आ गया। सावित्री ने सत्यवान् से प्रार्थना की कि आज मैं भी आपके साथ वन देखने चलूँगी। सास–ससुर से आज्ञा लेकर वह सत्यवान् के साथ गयी। एक वृक्ष पर चढ़कर सत्यवान् लकड़ी काटने लगे। सावित्री उन लकड़ियों को इकट्ठा करती जाती थी। एकाएक सत्यवान् के सिर में पीड़ा होने लगी। वह नीचे उतरकर लेट गये। सावित्री सिर दबाने लगी। सावित्री ने देखा कि एक भयंकर आकृति भैंसे पर चढ़ी सामने खड़ी है। वह डर गयी और उससे पूछने लगी – ''आप कौन हैं ?'' उसने कहा – ''मैं यमराज हूँ।'' यह कहकर सत्यवान् के प्राण निकाल कर वह चल दिया। पति का सिर गोद से नीचे रखकर वह यम के पीछे चल दी। कुछ दूर जाने के बाद यमराज ने पीछे घूमकर देखा कि सावित्री आ रही है। यमराज ने कहा – ''देख बेटी, मेरे साथ कोई नहीं जा सकता, तुझे जो चाहिए माँग ले।'' सावित्री ने कहा – ''मेरे ससुर के नेत्र खुल जायें।'' यमराज ने कहा – ''ऐसा ही होगा।'' पर सावित्री पीछे–पीछे चलती ही रही। पत्तों की खड़खड़ाहट होने से यमराज ने पीछे घूमकर देखा कि सावित्री चली आ रही है। यमराज ने कहा – ''देख बेटी, मेरे साथ कोई नहीं आ सकता। मेरा पीछा न कर, तुझे जो चाहिए माँग ले और लौट जा।'' सावित्री ने कहा – ''मेरे ससुर को राजपाट वापस मिल जाये।'' यमराज ने कहा – ''जा, ऐसा ही होगा।'' परन्तु सावित्री ने पीछा न छोड़ा। यमराज ने कहा – ''तू अब आगे नहीं जा

सकती। इस दुर्गम राह पर जीवित आत्मा नहीं जा सकती।'' सावित्री ने कहा – ''आप तो धर्म के ज्ञाता हैं। पत्नी का धर्म है कि वह पति के साथ रहे।'' यमराज बोले – ''मैं तेरी नीति बुद्धि से प्रसन्न हूँ, तू कुछ वरदान माँग ले और घर लौट जा।'' सावित्री ने कहा – ''मेरे पिता पुत्रवान् हों।'' यमराज ने कहा – ''ऐसा ही होगा।'' सावित्री तब भी न लौटी तो यमराज ने कहा – ''मैं एक वरदान और दे सकता हूँ, तू जो चाहे माँग ले और घर लौटकर पति का दाह संस्कार कर।'' सावित्री ने कहा – ''मेरे सौ पुत्र हों।'' यमराज ने कहा – ''तथास्तु (ऐसा ही होगा)।'' परन्तु सावित्री फिर भी साथ चलती रही। यमराज ने कहा – ''इतने वरदान पा लेने पर भी तू मेरे पीछे क्यों चल रही है ? जा घर लौट जा।'' सावित्री ने कहा – ''यमराज जी ! आर्य नारियाँ दूसरा पति नहीं करतीं। पुत्रों के वरदान के साथ पति भी तो मिलना चाहिए, नहीं तो पुत्र कैसे होंगे ?'' यह सुनते ही यमराज चौंक पड़े और सावित्री से कहने लगे – ''बेटी तू बड़ी पतिव्रता है। जा, अपने पति को ले जा और आनंद से रह।'' सावित्री शीघ्र लौट पड़ी। आधी रात को उस दुर्गम राह पर वापस चलकर पति के सिर को गोद में रखा ही था कि उसमें चेतना आ गयी। वह उठकर बैठ गया और कहने लगा, ''तुमने मुझे जगाया भी नहीं, मुझे नींद आ गयी थी। मैंने आज बड़ा ही भयंकर सपना देखा था कि एक अति डरावनी आकृति मुझे बाँधकर ले जा रही है।'' सावित्री ने कहा, ''स्वप्न की बात जाने दो। शीघ्र कुटी पर चलो। मेरे वृद्ध सास–ससुर चिंता कर रहे होंगे।'' कुटी पर आकर देखा कि माता–पिता की आँखों से दिखाई पड़ने लगा है और वे पुत्र–पुत्रवधू के लिए चिंतित हैं। सावित्री ने आकर दोनों के पैर छूए और रात्रि की भयंकर घटना कह सुनाई। जिस राजा ने उनका राज्य छीन लिया था, उसका देहान्त हो जाने से वहाँ के मंत्रीजन तिलक की सामग्री लेकर अपने राजा को लेने आये और आनन्दपूर्वक घर ले गये। यथासमय सावित्री के भाई होने का समाचार भी मिला। सत्यवान् दीर्घजीवी हुआ और उसके सौ पुत्र हुए।

इसी कथा के अनुसार सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपने पति की दीर्घायु की कामना करके इस व्रत और वटपूजन करती हैं।

७—गंगा दशहरा

यह ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की दशमी को होता है। इसी दिन आकाश से गंगा जी महादेव जी की जटाओं में समाईं और फिर उससे

उतरकर पृथ्वी पर अवतरित हुई थीं। इस दिन गंगा जी में स्नान का विशेष महत्व है। जहाँ गंगा जी नहीं हैं, वहाँ के मनुष्य अन्य नदियों अथवा जलाशयों में स्नान करके दान–पुण्य करते हैं। इस दिन यदि सोमवार और हस्त नक्षत्र हो, तो यह पर्व सब पापों को हरने वाला कहा जाता है। इस दिन तिलों से युक्त गंगाजल से तर्पण करना चाहिए।

गंगा अवतरण की कथा – अयोध्या के एक महाराजा सगर हुए। उनके साठ हजार पुत्र कपिल मुनि की क्रोधदृष्टि से भस्म हो गये थे। उनको तारने के लिए सगर के पौत्र अंशुमान तथा प्रपौत्र दिलीप ने गंगा जी को पृथ्वी पर लाने के लिए बहुत यत्न किये। दिलीप के पुत्र भगीरथ ने तपस्या करके गंगा जी को पृथ्वी पर भेजने का ब्रह्मा जी से वरदान पाया। गंगा जी पृथ्वी तक जाने को राजी तो हो गयीं, परन्तु उन्होंने कहा – ''जब मैं ऊपर से उतरूँगी, तो मेरे वेग को कौन सम्हालेगा ?'' भगीरथ ने फिर शिव जी की आराधना की और उनसे प्रार्थना की – ''आप गंगा जी के वेग को सँभालें।'' शिव जी के राजी होने पर गंगा जी पृथ्वी पर आयीं और राजा सगर के साठ हजार पुत्रों का उद्धार कर दिया।

८—निर्जला एकादशी

एक वर्ष में २४ एकादशी होती हैं। इनमें जेठ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी श्रेष्ठ मानी जाती है। केवल इसी एकादशी का व्रत करने से वर्ष की शेष एकादशियों का फल मिल जाता है। इस एकादशी के सूर्योदय से द्वादशी के सूर्योदय तक जल भी नहीं पिया जाता। इस दिन जल का दान करना चाहिए। मिट्टी के पात्र में जल या शरबत भरकर ब्राह्मण को दिया जाता है।

अंतर्कथा – पांडवों में भीमसेन बहुत बलवान और लम्बे–चौड़े थे, परन्तु वह भूख सहन नहीं कर सकते थे। इसलिए उन्होंने व्यास जी से पूछा – ''कोई ऐसा एकादशी व्रत बताइये ताकि मैं एक ही व्रत करके पूरा फल पा जाऊँ।'' व्यास जी ने उन्हें यही निर्जला एकादशी बतायी। बड़ी कठिनाई से भीम ने इस दिन निर्जल रहकर इस व्रत को किया।

९—बहुला चौथ

श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की चौथ को बहुला चौथ कहते हैं। भार्गवों में इस दिन पुत्रवती स्त्रियाँ गौ–बछड़े का पूजन करती हैं तथा जौ का बना

अलोना (बिना नमक का) भोजन किया जाता है। गाय का घी, दही और दूध का सेवन नहीं किया जाता। भैंस का दूध, दही और घी प्रयोग कर सकती हैं।

अंतर्कथा – एक धनी साहूकार ने एक तालाब खुदवाया। परन्तु अनेक उपाय कर लेने पर भी उसमें पानी न भरा जा सका। ज्योतिषियों ने बताया कि पुत्र की बलि दो, तब जल भरेगा। बड़ा पुत्र साहूकार को बहुत प्यारा था। वह विवाहित था। छोटा साहूकारनी को बहुत प्यारा था। अनेक तर्क–वितर्क के पश्चात् यह निश्चय हुआ कि पुत्रवधू के दो पुत्र हैं, भगवान की दया होगी, तो और भी हो जायेंगे; उनमें से एक बलि दे दी जाय। उन्होंने बहू को तो मायके भेज दिया पर बड़े पोते को रख लिया। शुभ दिन शोधकर तालाब पर गये और पोता का बलिदान कर दिया। थोड़ी ही देर में लहराता हुआ जल तालाब में भरने लगा। साहूकार प्रसन्न होकर घर लौट आये, पर हृदय में संताप अधिक था। पोते की सूरत किसी प्रकार भूलती ही न थी। उसी दिन बहू मायके के गाय–गोरू लेकर पानी पिलाने के लिए निकली। स्वच्छ जल से भरा तालाब देखकर उसी पर जल पिलाने लगी। उसे नहीं मालूम था कि यह मेरे ससुर का बनवाया ताल है। वह जल की सुन्दर शोभा देख रही थी कि एक लड़के को मिट्टी में सना तालाब के किनारे पर अचेत पड़ा देखा। उसे उठाकर वह घर ले गयी और अपने पुत्र के समान ही स्नेहपूर्वक उसे भी रखने लगी। कुछ दिन बाद बहू ससुराल वापस आयी, तो मुख्य द्वार पर सास–ससुर ने बहू के साथ दो पोतों को देखा। वे बड़े असमंजस में पड़ गये। सास पूछने लगी, ''बहू एक पुत्र तो तुम यहाँ छोड़ गयी थी। यह दूसरा बालक कौन है ?'' बहू ने उसके पाने का हाल बताया। सबको बड़ा आनंद हुआ। सास ने बहू को पोते का बलिदान देने का सब हाल बता दिया। जिस दिन बहू ने लड़के को पाया था, उस दिन चौथ थी। एक वर्ष व्यतीत होने पर चौथ तिथि को गाय–बछड़ा सजाकर सबने पूजा की, तब से यह पूजा प्रचलित हो गयी। बहुत–सी हिन्दू जातियों में भादों मास की कृष्ण पक्ष की चौथ को यह पूजा की जाती है।

१०—हरियाली अमावस

श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की अमावस्या को यह पूजा होती है। सौभाग्वती स्त्रियाँ पहले दिन सिर से स्नान करके मेंहदी लगाती हैं। मैदा या

आटा के ''ऊबेफल'' नामक पकवान बनाकर रखती हैं। प्रातः मुख्य द्वार के किवाड़ों के निचले भाग को गोबर–मिट्टी से लीपकर गेरू से पोत देते हैं। फिर मैदा में हल्दी मिलाकर, पानी में घोलकर पिठावा तैयार करते हैं। इससे दाहिने ओर के किवाड़ पर चक्र और बाँई ओर के किवाड़ पर अमावस रखी जाती हैं (चित्र पृष्ठ ७२)। हल्दी, चावल व जल से पूजा की जाती है। एक पात्र में १४ फल, थोड़ा गुड़ या शक्कर तथा द्रव्य रखकर बायना निकाला जाता है। बायना परिवार के सभी पूज्यजनों को दिया जाता है। यह त्योहार नारायण और लक्ष्मी जी की पूजा का द्योतक है। चक्र, भगवान के सुदर्शन चक्र तथा अमावस लक्ष्मी जी का रूप है।

११—नागपंचमी

श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की पंचमी को नाग की पूजा की जाती है। पानी रखने के स्थान की दीवार को आवश्यकतानुसार धो, लीप या पोतकर एक नाग हल्दी से और एक नाग कोयला घिसकर बनाया जाता है (चित्र पृष्ठ ७१) फिर भीगे हुए चने और मूँग से नागों की पूजा की जाती है और हल्दी, चावल, दूध व बिनौला चढ़ाया जाता है। मूँग और चने से बायना निकालकर कुछ द्रव्य सहित पूज्यजनों को दिया जाता है।

नागपंचमी की कथा – गाँव के कुएँ पर कुछ स्त्रियाँ बैठकर अपने–अपने मायके से आये हुए सिंधारे के विषय में वर्णन कर रही थीं। एक स्त्री, जिसके मायके में कोई नहीं था, दुःखी होकर कहने लगी – ''मेरे तो कोई बाँबी का नाग ही नहीं है, जो मैं चार पहर को भी पीहर जा सकती।'' कुएँ की जगत के समीप एक साँप की बाँबी थी, नाग ने सुना तो मनुष्य का रूप रखकर आया और कहने लगा – ''बहन, मैं तुम्हें लिवाने आया हूँ।'' उसकी ससुराल वालों ने कहा – ''हमने तो कभी सुना ही नहीं कि इसके कोई भाई है, हम कैसे भेज दें ?'' पर भाई के बहुत आग्रह करने पर उसका पति और नाई भी साथ चलने को तैयार हो गये। बहुत दूर जंगल पार करके एक महल मिला उसी में वे ठहरे। महल में जहाँ–तहाँ सर्प ही सर्प थे। इनके पैर रखने से उनके कितने ही अण्डे–बच्चे कुचल गये। भाई ने बहन को बता दिया कि चार पहर रुकना। सबों की खूब खातिरदारी हुई। ज्यों–ज्यों समय बीतता था वह बच्चों को रुलाने लगी। उसके पति की इच्छा लौटने की नहीं थी, पर बच्चों के रोने से परेशान होकर वे चल दिये। चलते समय

भाई ने बहुत कुछ दिया पर उसके पति की धोती व नाई की पेटी वहीं रह गयी। राह में याद आयी। नाई लौटकर लेने गया, तो वहाँ न महल था न बस्ती। एक पेड़ पर धोती तथा पत्थरों पर पेटी पड़ी मिली। नाई ने सारा हाल बताया। स्त्री के पति ने उससे कहा – ''सच–सच बता, यह क्या रहस्य था ?'' तब उसने बाँबी के नाग का सारा हाल सुनाया। इसलिए इसका नाम नागपंचमी पड़ा। उत्तर प्रदेश में इसको **गुड़िया** भी कहते हैं।

१२—हरियाली तीज

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की तीज को यह त्योहार होता है। पश्चिम भारत (राजस्थान आदि) के निवासियों में यह त्योहार बड़े समारोह से मनाया जाता है। पर पहले दिन सिर से स्नान करके सौभाग्यवती स्त्रियाँ, बहुएँ व कन्याएँ सिर गूँथती, मेंहदी लगाती, नये–नये रंगीन वस्त्र पहनती हैं। यह त्योहार मायके में मनाने की प्रथा है। यदि वे ससुराल में हों, तो मायके वाले वस्त्र, फल और मिठाई भिजवाते हैं। इसे **'सिंधारा'** भेजना कहते हैं। घेवर व इंदरसा इस दिन की आवश्यक मिठाइयाँ हैं। बहू–बेटियाँ रंगीन वस्त्र पहन, मेंहदी लगाकर झूला झूलती हैं। सावन और कजरी गाने की ध्वनि से वातावरण बहुत ही रसीला हो जाता है। इस त्योहार को मनाने की उमंग कन्याओं के मन में कई दिन पहले से होने लगती है। इस दिन गौरी की पूजा करके पूड़ी–शक्कर से, कुछ द्रव्यसहित, बायना काढ़कर ननद को दिया जाता है।

१३—रक्षाबंधन

श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी को यह त्योहार मनाया जाता है। यह तीन कारणों से मनाया जाता है।

(१) श्रवण की स्मृति में, (२) रक्षाबंधन, (३) श्रावणी पूर्णिमा। भार्गवों में यह त्योहार श्रवण की स्मृति में मनाते हैं। इससे माता–पिता की सेवा करने की शिक्षा मिलती है।

दो–चार दिन पहले द्वार के दोनों किवाड़ों को साफ करते हैं। सूख जाने पर पेवड़ी से (पेवड़ी टेसू के फूल के रंग में खरिया मिलाकर बनती है) सोन रखे जाते हैं जिसमें ५ रंग भरे जाते हैं। दाहिने किवाड़ पर जो आकृति बनायी जाती है उसे 'केला' और बायें किवाड़ पर जो बनती है उसे 'छाबड़ी'

कहते हैं। इन्हें बना लेने के बाद नीचे के भाग में चिड़िया, तोता, मोर और तितली आदि बनाते हैं। सोन के ऊपरी दोनों सिरों पर कोयला घिसकर नाग बनाये जाते हैं (चित्र पृष्ठ ७३ व ७४)। यह चित्रकारी पहले दिन बनाकर किवाड़ों को सुसज्जित कर लेते हैं (सफेद कागज पर भी बना ली जा सकती है और उसी को किवाड़ों पर चिपका दें)। सलोनूं के दिन घर के पुरुष व लड़के रोली, अक्षत, पान, फूल से सोन की पूजा करते हैं, सेंवई, खीर का भोग लगाया जाता है और रक्षासूत्र लगाया जाता है। किवाड़ पर चित्रकारी करने का आशय है – किवाड़ की चौखट काँवर का बाँस, दोनों किवाड़ पर बने काँवर (सोन) में श्रवण के माता–पिता बैठे हैं। यह त्योहार पुरुषों को माता–पिता की सेवा करने का भाव दर्शाता है; इससे बालकों को मातृ–पितृसेवा की शिक्षा मिलती है।

रक्षाबंधन पर बहनें भाइयों को मिठाई खिलाती हैं व रोली–अक्षत से टीका कर राखी बाँधती हैं। यदि भाई शहर से बाहर होते हैं, तो उन्हें भी बहनें राखी व रोली–चावल भेजती हैं।

कथा – श्रवण के माता–पिता अंधे थे। कोई हिंसक पशु उन्हें कष्ट न पहुँचा सके और उनको उठाकर ले जाने के लिए सुविधा हो इसलिए श्रवण ने एक काँवर बनायी। एक पलड़े में पिता, दूसरे में माता को बिठाकर वह जहाँ जाता साथ ले जाता था। रात्रि होने पर काँवर को किसी ऊँचे वृक्ष पर टाँगकर स्वयं भी आराम कर लेता था। एक रात माता–पिता को प्यास लगी, श्रवण तूँबा लेकर जलाशय पर जल भरने गया। उसी जलाशय के समीप राजा दशरथ शिकार की तलाश में घूम रहे थे। तूँबा जल में डूबोने के शब्द को सुनकर राजा ने यह समझा कि कोई हिरन पानी पीने आया है, यह ध्वनि उसी की है। जिस ओर से घड़ा भरने की आवाज आयी थी उस ओर उन्होंने तीर छोड़ा। बाण लगने पर श्रवण घायल होकर 'हा मरा' कहकर गिर पड़ा। मनुष्य की आवाज सुनकर राजा जलाशय पर गये और देखा कि उनका शिकार हिरन नहीं मनुष्य है। राजा अपने अपराध की क्षमा माँगने लगे। श्रवण ने कहा – "मेरे अंधे माता–पिता वृक्ष में बँधी काँवर में बैठे हैं, उन्हें जल पिला आओ।" राजा जल लेकर गये। श्रवण के माता–पिता ने पूछा – "तुम कौन हो ? बताओ, तब हम जल पियेंगे।" राजा ने सब हाल बताकर क्षमा माँगी। यह सुनकर दोनों विलाप करने लगे और राजा दशरथ को शाप दिया कि जैसे हम पुत्र–शोक में मर रहे हैं, तुम भी

ऐसे ही मरोगे। राजा ने तीनों का दाह संस्कार किया और दुखित मन अपने राज्य को लौटे। शाप के कारण ही राजा दशरथ ने राम के वियोग में प्राण त्याग दिये।

दूसरी कथा – एक समय देवताओं और दैत्यों में १२ वर्ष तक युद्ध होता रहा। दैत्य बली थे, उन्होंने देवताओं को हरा दिया। देवताओं के राजा इंद्र जब हार गये और उन्हें जीतने की आशा न रही, तो प्राण दे देने के अतिरिक्त उन्हें कोई उपाय न दीख रहा था। तब इन्द्राणी ने गुरु बृहस्पति से श्रावणी पूर्णिमा के दिन यज्ञ–पूजन कराके इंद्र के हाथ में रक्षा कवच बँधवाया। उसी के प्रताप से इंद्र की जीत हुई। देवों ने दैत्यों को हरा दिया। तब से रक्षा–सूत्र बाँधने की प्रथा चली आ रही है। इस दिन पुरोहित यजमानों के रक्षा–सूत्र बाँधते हैं और बहनें भाइयों के हाथ में राखी बाँधती हैं।

१४—चाँदन छठ

यह भादों मास के कृष्ण पक्ष की छठ को होती है। भार्गव जाति में इस दिन स्त्रियाँ सिर से स्नान करके एक पट्टे पर लाल चंदन से सूर्य और सफेद चंदन से चाँद बनाकर पूजा करती हैं। थोड़ा–थोड़ा गेहूँ पूजा करने वाली सब स्त्रियाँ चढ़ाती हैं। पूजा के बाद लाल चंदन माँग में व माथे पर लगाती हैं और सफेद चंदन हथेली में रखकर पी लिया जाता है। इस दिन बिने हुए गेहूँ का आटा पीसकर अलोना (बिना नमक का) भोजन किया जाता है। नवविवाहित वधुओं को लगातार पाँच वर्षों तक तुलसी पूजा इसी दिन से एक माह तक करनी चाहिए।

पूजा विधि – तुलसी के वृक्ष को किसी गमले में लगावें (प्रायः घर के आँगन में तुलसी लगाने की प्रथा है)। नित्य उस स्थान को धोकर या लीपकर पृथ्वी पर एक सथिया (स्वास्तिक) हल्दी से बनावें। उस पर कटोरा रखकर उसमें गौर को रखें। कटोरे के चारों कोनों पर मिट्टी की ४ डली रखें, ये गणपति कहलाते हैं।

अनामिका उँगली में हल्दी–चावल लगाकर बायें हाथ में जल का पात्र लेकर गौर पर जल चढ़ावें और ये वाक्य बोलती जायँ –

गंगा का घाट, यमुना का पाट।
राता फूल बतीसी जोड़ी, तहाँ बैठाऊँ ईश्वर गौरी।

ईश्वर ईश्वर तुम महीश्वर, कानन कुंडल जौ की माला।
राजा पूजे राज को पाट को, मैं पूजूँ सुहाग को भाग को।
खाऊँ अलोना, देऊँ सलोना।
मन चीते फल पाइये, रानी को दीने कंत।
कंत चोली, पेट पोली, भाई भतीजे अविचल जोड़ी।

तुलसी पूजा का वैदिक मंत्र –

तुलस्यमृतनामासि सदा त्वं केशवप्रिया।
स्नानं कुरु महादेवी कल्याणं कुरु सर्वदा।।

तुलसी में अर्घ्य दें और कहती जायें –

लारी झारी लावा के तावा,
तुलसी दोनों पाखे पूजिए, रूप दिये करतार
कै तू रूपे आगली, कै कुलवंती नार ?
मैं ही रूपे आगली, मैं ही कुलवंती नार,
भाई भतीजे आगली, साईं सेती नार।

गौर को कटोरे से निकाल कर कटोरा के नीचे बने सथिया पर रखें, फिर हल्दी से तिलक कर अक्षत लगावें। फूल, हींगलू–मेंहदी चढ़ावें, २४ गेहूँ तथा हल्दी बायें हाथ की हथेली पर रखकर गेहूँ में हल्दी लगाकर गौर पर चढ़ा दें। साड़ी के पल्ले से सूत का तार निकालकर सीप पर रखकर या दीपक जलाकर यह आरती करें –

'चाकचढ़ा कुम्हार घड़ा कडुआ तेल कसूमल बाती, गौर आगे दिया बाती।'

आरती के बाद गौर के पैर छुएँ और 'गाड़ी का चढ़ना, मूँढ़े का बैठना, पानी की जेठ, पिया की भेंट, कहकर तुलसी जी से आशीर्वाद माँगें। इसी प्रकार नित्य पूजा करके १५ दिन बाद की आगामी छठ को ब्याह वाले वर्ष ६० लड्डू व १ रु० रखकर निकाले और ये ६० लड्डू खायें। पितरपक्ष की छठ को तुलसी पूजन समाप्त किया जाता है। फिर हर साल छठ को ३० लड्डू निकालें और ३० खाये जाते हैं।

चाँदन छठ की कथा – विदर्भ देश में एक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री रजोधर्म के समय सब वस्तुओं का स्पर्श कर लेती थी। इस दोष के कारण मरने पर वह कुतिया हुई और उसी के संसर्ग दोष से ब्राह्मण बैल हुआ। ब्राह्मण के पुत्र का नाम सुमति था। बैल और कुतिया के रूप में उसी घर में उनका पुनर्जन्म हुआ और वे उसी घर में रहने लगे।

एक समय सुमति ने अपने माता–पिता का श्राद्ध किया। खीर बनाने के लिए दूध रखा था, उसमें साँप ने मुँह डाल दिया। कुतिया ने देख लिया, उसने अपने पंजों से दूध बिखेर दिया। बहू ने कुतिया को चूल्हा से जलती लकड़ी निकाल कर खूब मारा और कहा कि तुझे खाना न दूँगी। बैल को भी उस दिन पूरी बनाने के लिए तेल निकालने को कोल्हू में जुतना पड़ा, शाम तक उसे भोजन न मिला। शाम को बैल खूँटे पर बाँधा गया; तब कुतिया खिसककर उसके पास गयी और कहने लगी – "आज तो भूख के मारे प्राण निकले जा रहे हैं। मेरे ऊपर इतनी मार पड़ी है कि सारा अंग दुख रहा है।" बैल ने कहा, "अरी, मेरा भी आँख और मुँह बाँध दिया गया था, दिन भर कोल्हू चलाना पड़ा। भला, बेटा के ऐसे श्राद्ध करने से क्या लाभ जबकि हम दोनों ही भूखे मर रहे हैं।" सुमति पशुओं की भाषा समझ लेता था। माता–पिता की ये बातें सुनकर उसे बड़ा दुःख हुआ। वह एक ज्ञानी मुनि के पास गया और इनके उद्धार का उपाय पूछने लगा। उस मुनि ने पूर्व जन्म का हाल बताकर कहा – "यह रजोधर्म के समय सब स्पर्श करती थी, इसी दोष से इन्हें कुतिया और बैल की योनि मिली है। यदि किसी स्त्री ने रजोधर्म के पहले चाँदन छठ का व्रत व उद्यापन किया हो और वह अपने व्रत का फल इन्हें दे दे, तो इनका उद्धार हो सकता है।"

सुमति घर आकर उदास होकर बैठ गया। स्त्री ने उदासी का कारण पूछा तो उसने सब हाल बताया। सुमति की पत्नी ने कहा – "चिन्ता न कीजिए। मैंने व्रत और उद्यापन किया है, मैं अपने व्रत का फल दे दूँगी।" तत्पश्चात् छत पर बैठकर उसने स्नान किया। नाली के जल गिरने के स्थान पर बैल और कुतिया को बाँध दिया गया। उसके स्नान का जल ज्यों ही दोनों पर पड़ा त्यों ही व्रत के फल से उनकी मुक्ति हो गयी और दिव्य देह पाकर वे विमान पर बैठकर स्वर्ग को प्रस्थान कर गये।

१५—कृष्ण जन्माष्टमी

भादों मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को भगवान कृष्ण का जन्म–दिन मनाया जाता है। दिन में पूर्व या पश्चिम की दीवाल को धो–लीपकर गेरू से लगभग १ फुट लम्बा व १ फुट चौड़ा पोत कर और उस पर पिठावा से जाँटी का वृक्ष अंकित करते हैं। (चित्र पृष्ठ ७५) उसके पास जाँटी के वृक्ष

की डाली खड़ी करके थोड़ा–सा अनाज डाल दिया जाता है और लम्बी बत्ती रखकर दीपक भी जलाया जाता है।

मैदा की पपड़ी और दीवड़ा बनाकर ८ पपड़ी व ४ दीवड़े जाँटी पर चढ़ाये जाते हैं। घर के स्त्री–पुरुष–बच्चे सभी पूजा करते हैं। श्रावणी के दिन का बँधा रक्षासूत्र खोलकर जाँटी वृक्ष पर चढ़ाया जाता है और सभी कुछ द्रव्य चढ़ाते हैं। चढ़ी हुई पपड़ी, दीवड़ा और पैसे जाँटी की डाल लाने वाले को दे दिया जाता है। बहुएँ १४ पूरी व हलुआ से बायना निकालकर घर की बड़ी–बूढ़ी स्त्री को देती हैं।

प्रसाद के रूप में आठ–आठ पपड़ी, चार–चार दीवड़ा सबको दिये जाते हैं। ब्याह वाले वर्ष लड़कियाँ ११६ दीवड़ा निकालती हैं और रुपये रखकर ननद को देती हैं और ११६ दीवड़ा खाती हैं। नमक नहीं खाया जाता है।

रात्रि के १२ बजे भगवान का जन्मोत्सव मनाया जाता है। भगवान के लिए चरणामृत दूध, दही, गंगाजल, शहद व शक्कर डालकर बनाया जाता है। इतने मखाने, बादाम व पिस्ते के टुकड़े भी डाले जाते हैं। अभिषेक के पश्चात् भगवान का भोग लगाया जाता है तथा प्रसाद प्राप्त किया जाता है। भोग में प्रायः रामदाने की बर्फी, चिरौंजी व मींगी की बर्फी, रामदाने व धनिये की पंजीरी व फल आदि होते हैं। भगवान की झाँकी आदि सजाई जाती है।

१६—भादों शुक्ल पक्ष सप्तमी

संतान सप्तमी व्रत — यह व्रत भादों मास की शुक्ल पक्ष की सप्तमी को होता है। इसे मुक्ताभरण व्रत भी कहते हैं। यह पूजा दोपहर को चौक पूरकर शिव–पार्वती की स्थापना करके व्रती स्त्री–पुरुष अपने पुत्र–पौत्र की वृद्धि, अन्न, धन और मुक्ति की इच्छा से पूजन करते हैं। चंदन, फूल, अक्षत, धूप–दीप, भोग, आरती करके पूजा समाप्त की जाती है। मूर्ति पर नारियल चढ़ावें तथा गुड़ या गुलगुला का भोग अर्पण करें। कलाई में रक्षासूत्र बाँधें और प्रार्थना करें — हे पार्वती, शिव जी सहित मेरी पूजा स्वीकार करें। हमें सब प्रकार से आनंदित रखें।

१७—ओक द्वादशी (गौ–वत्स पूजा)

भादों मास के कृष्ण पक्ष में ओक द्वादशी होती है। एक पट्टे पर मिट्टी के गाय–बछड़ा बनाकर पुत्रवती स्त्रियाँ पूजा करती हैं। बहुत–सी जातियों में कार्तिक की द्वादशी को साक्षात् गौ–बछड़े की पूजा होती है।

भार्गवों में भीगे मूँग व चना से पूजा होती है, उसी से बायना निकाला जाता है और सास को दिया जाता है। इस दिन इन्हीं अनाजों का बना भोजन किया जाता है।

अन्तर्कथा — एक बूढ़ी स्त्री की बहू नादान थी। सास गाय चराते समय बहू से कह गयी कि तू बछड़ा सँवार कर रखना। बहू सँवारने का अर्थ न समझी। बछड़े को काटकर चूल्हे पर चढ़ा दिया। जब सास जंगल में गाय छोड़कर लौटी तो बछड़े को खूँटे पर न पाकर पूछने लगी, ''बहू बछड़ा कहाँ है ?'' बहू ने उत्तर दिया, ''चूल्हे पर चढ़ा है।'' बुढ़िया घबराई और झट से मटका चूल्हे पर से उतारकर घूरे पर उड़ेल दिया और वहीं बैठकर बछड़े के अंग–अंग यथास्थान लगाकर विलाप करने लगी। उसके रोने से सारा जंगल गूँज उठा। एक महात्मा उसके रोने का शब्द सुनकर उधर आ निकले। बुढ़िया ने उनसे विनती की और बछड़े का जीवनदान माँगा। उन्होंने अपने कमण्डल के जल से छींटे देकर बछड़े को जीवित कर दिया। बुढ़िया बहुत प्रसन्न हुई और अपनी चरती हुई गाय को ढूँढ़कर बछड़े सहित घर लौटी। उसने गाँव भर में घूम–घूम कर घर–घर उस बछड़े के जीवित होने का वृत्तान्त सबसे कहा। सबने उस गाय–बछड़े की पूजा की और मूँग, मोठ, चना, बाजरे से पूजन करके उसी का भोजन किया। इस दिन गाय का दूध, दही तथा घी का सेवन वर्जित है, परन्तु भैंस का घी–दूध सेवन कर सकते हैं।

१८—हरतालिका तीज

भादों मास की शुक्ल पक्ष की तीज को हरतालिका तीज कहते हैं। तीज के पहले दिन शाम को भोजन के बाद खीरा खाया जाता है। दातून से मुख की शुद्धि करके व्रत का निश्चय करके तीज को निर्जल व्रत करते हैं। यह व्रत प्रायः स्त्रियाँ ही करती हैं। शिव–पार्वती की मूर्ति बनाकर रात में तीन बार पूजा की जाती है। रात भर जागरण होता है। पर्वती जी के लिए मैदा ओर बेसन के आभूषण बनाकर यथास्थान पहनाये जाते हैं। फल–फूल बेलपत्र व मिष्ठान्न से पूजा और भोग –तथा कपूर से आरती होती है। प्रातः सूर्योदय से पहले स्नान करके शिव–पर्वती की मूर्ति (यदि मिट्टी की बनी हो) नदी या तालाब में विसर्जन कर दी जाती है। पूजा में चढ़ा सामान ब्राह्मण को दिया जाता है। स्त्रियाँ स्वयं शरबत से पारण करती हैं। यथाशक्ति भोजन व दक्षिणा सुयोग्य ब्राह्मण अथवा सौभाग्यवती ब्राह्मणी को दी जाती है तब भोजन किया जाता है। इस व्रत को सर्वप्रथम पार्वती जी ने किया था।

अन्तर्कथा – हिमांचल के यहाँ पार्वती जी का जन्म हुआ था। इनके रूप–गुण से नारद जी बहुत प्रभावित हुए और विवाह विष्णु भगवान से कर देने का प्रस्ताव हिमांचल के सम्मुख रखा। हिमांचल हर्षपूर्वक विष्णु को कन्या देने को राजी हो गये। पर जब यह समाचार पार्वती जी ने सुना, तो उन्होंने अपनी सखी से कहा, ''मैं तो शिव जी के अतिरिक्त किसी से विवाह नहीं करूँगी।'' सखी ने कहा – ''शिव तो वैरागी हैं। उन्हें किस प्रकार विवाह के लिए राजी किया जा सकेगा ?'' पार्वती ने कहा – ''मैं तप करूँगी।'' अतः दोनों जंगल को चल दीं। एक गुफा में रहकर वे शिव जी की आराधना करने लगीं। हिमांचल ने पार्वती जी की बहुत खोज की, पर कहीं पता न लगा। पार्वती जी ने कठिन तप करते–करते भादों मास के शुक्ल पक्ष की तीज को हस्त नक्षत्र में बालू की शिवमूर्ति बनाकर उसका पूजन किया। दिन भर निर्जल व्रत रखा और रात भर जागरण किया। इस पूजा से शिव जी ने प्रसन्न होकर दर्शन दिये और वर माँगने को कहा। पार्वती जी ने शिव जी से उन्हीं को पति रूप में पाने की याचना की।

संयोगवश जब दोनों सखियाँ पूजन–सामग्री जल में प्रवाह करने नदी तट पर गयीं, तो वही पर हिमांचल पार्वती जी को ढूँढ़ते हुए आ पहुँचे और दोनों को देखकर प्रसन्न हुए और पूछा – ''बेटी तू घर छोड़कर क्यों चली आयीं ?'' पार्वती ने कहा – ''हे पिता जी ! आप मेरा विवाह विष्णु जी से करना चाहते थे, पर मैं तो शिव जी के अतिरिक्त किसी से विवाह न करूँगी। यदि आप वचन दें कि मेरा विवाह शिव जी से करेंगे, तो मैं घर चल सकती हूँ।'' हिमांचल सब प्रकार से कन्या को संतुष्ट कर घर ले आये और शिव जी के पास विवाह का प्रस्ताव भेजा। यथासमय शिव जी के साथ पार्वती का विवाह हुआ।

यह व्रत सौभाग्य को देने वाला है। इस व्रत को एक बार करके फिर जीवन भर छोड़ा नहीं जाता, इसलिए हम लोगों के यहाँ इस कठिन व्रत को करने का चलन कम हो गया है।

चरणदास दिवस – भार्गववंशशिरोमणि **संत श्री चरणदास जी का जन्म अलवर के डेहरा नामक ग्राम में इसी तिथि को हुआ था।** इस दिन बड़े समारोह से उनका जन्म–दिवस डेहरा में मनाया जाता है। प्रत्येक स्थान की स्थानीय भार्गव सभाएँ भी इस दिन इनका जन्म–दिवस मनाती हैं और अपने वंशभूषण संत की याद करती हैं।

१६—गणेश चौथ

भादों मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को दोपहर के समय गणेश जी की पूजा की जाती है। २१ लड्डुओं या मालपुओं का भोग लगाया जाता है। इस चौथ को चंद्रमा नहीं देखना चाहिए। यह व्रत पुत्र, पौत्र, धन, विद्या, आयु और कीर्ति देने वाला है।

अन्तर्कथा – एक बार शिव जी देशाटन को गये थे। पार्वती जी ने शरीर में उबटन लगाया और उतरे हुए मैल से मनुष्य–आकृति बनायी। बहुत सुन्दर एक बालक की आकृति बनी थी। पार्वती जी ने मंत्र द्वारा उसे सजीव कर दिया और उसे द्वाररक्षक का भार सौंप कर आज्ञा दी – ''देखो, जब तक स्नान करती हूँ कोई भीतर न आने पावे।'' संयोगवश उसी दिन शिव जी भोगवती से स्नान करके लौटे। भीतर जाने लगे, तो उस बालक ने उन्हें रोका। शिव जी क्रोधित हुए और त्रिशूल से उसका सिर काटकर भीतर चले गये। कटा–सिर चंद्रलोक में चला गया। पार्वती जी ने भोजन का प्रबंध कर तीन पात्रों में परोसा और शिव जी से बालक को बुलाने को कहा तथा उसकी उत्पत्ति का वृत्तांत भी सुनाया। शिव जी ने कहा – ''वह बालक मुझे अंदर नहीं आने दे रहा था, अतः क्रोधवश मैंने तो उसका सिर काट दिया।'' यह सुन पार्वती जी बहुत दुखित हुईं और उसे जीवित करने की प्रार्थना करने लगीं। त्रिशूल से कटते ही सिर चंद्रलोक में चला गया था और ढूँढ़ने पर भी नहीं मिला। शिव जी ने अपने गणों को चारों दिशाओं यह कहकर भेजा – ''किसी भी नवजात बच्चे का सिर ले आओ, तो उसके धड़ पर जोड़ दूँ; तभी यह जीवित हो सकेगा।'' एक हथनी नवजात बच्चे को छोड़कर कहीं गयी थी, शिव जी के गणों ने उसी का सिर काटकर ला दिया। शिव जी ने बालक के धड़ पर वही सिर रखकर उसे जीवित कर दिया। बालक ने उठकर पिता शिव जी को प्रणाम किया। यही बालक गणेश जी हुए। शिव जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया कि तुम देवताओं में श्रेष्ठ होगे। देवताओं की पूजा शुरू करने पर सबसे पहले तुम्हारी पूजा की जायेगी। यह घटना इसी चौथ को हुई थी।

२०—ऋषि पंचमी

भादों मास की शुक्ल पक्ष की पंचमी 'ऋषि पंचमी' कहलाती है। इस दिन कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, वशिष्ठ और जमदग्नि आदि ऋषियों की पूजा होती है। भार्गव इन्हीं ऋषि की संतान हैं इसलिए भी इस

दिन का विशेष महत्त्व है। हम लोगों के यहाँ इस पंचमी को भैया पंचमी कहते हैं। इस दिन भाइयों के टीका किया जाता है।

लौकिक पूजन विधि — चकोलियाँ, जो आटे की छोटी–छोटी गोलियाँ उंगली और अंगूठे से दबाकर बनायी जाती है, भाई–भतीजों की संख्या के अनुसार एक–एक जोड़ा चकोली एक पट्टे पर रखी जाती है और उन पर हल्दी, दही, चावल, खसखस के दाने लगाकर रखते हैं। साँवा और मकरा (पंचताड़ी) घास (यदि न मिले तो दूब) रखकर पूजा कर ली जाती है। एक अंगूठी को पीले या लाल कपड़े से ढँककर पट्टे पर रखकर उसकी पूजा की जाती है। भाई के माथे पर हल्दी से तिलक करके खसखस व चावल लगाये जाते हैं। भाई को नारियल या गोला दिया जाता है। भाई बहनों को रुपये देते हैं। ऋषि पंचमी का व्रत करने वाली बहनें केवल फलाहार करती हैं।

अन्तर्कथा — एक भाई और एक बहन दोनों में बड़ा प्रेम था। बहन के ससुराल चले जाने पर जब पंचमी का दिन निकट आया, तो भाई ने अपनी बहन के घर जाने का निश्चय किया। कुछ धन भी बहन को देने के लिए साथ ले लिया। जाने की राह जंगल और नदी पार करके थी। नदी चढ़ी हुई देख किनारे खड़ा होकर वह नदी से प्रार्थना करने लगा कि मुझे राह दो, तो मैं बहन के घर से लौटकर तुम्हें भेंट दूँगा। कुछ देर के लिए बहाव स्थिर हो गया। वह नदी पार कर गया। पार करने पर उसने वहाँ देखा कि एक विषधर अजगर राह रोके पड़ा है। उससे भी विनती की कि मुझे राह दे दो, मैं बहन के घर जा रहा हूँ। लौटकर आने पर मैं तुम्हें भेंट दूँगा। उसने भी राह दे दी। अब घना जंगल पड़ा। उसे पार करके जाना था। वन में एक बाघ दिखाई दिया, जिसे देखकर वह डर गया, पर उससे भी विनती की, तो बाघ ने भी राह दे दी। इस प्रकार चलते–चलते रात हो गयी। रात को ठगों ने पकड़ लिया और जो धन उसके पास था सब छीन लिया। उसके शरीर के टुकड़े–टुकड़े कर दिये। दिन निकलने पर लाश पर चील–कौवे मँडराने लगे। कटी उँगली, जिसमें अंगूठी थी, उठाकर एक कौआ ले गया। बहन ने चकोली का पट्टा पूजा करके छत पर रखा था। कौआ चकोली खाने लगा और अंगूठी सहित उंगली वहीं गिरा दी। बहन चरखा कात रही थी, चमकती अंगूठी देखकर उठाकर कपास की डलिया में रख दी। सोचती रही की यह तो भाई की सी अंगूठी है, पर यह अंगुली सहित यहाँ कैसे गिरी। चिन्ता के मारे सूत काता नहीं जाता था।

जंगल में शिव जी पार्वती जी के साथ जा रहे थे, चील–कौओं को देखकर पार्वती जी कहने लगीं — ''वहाँ चलकर देखो, ये चील–कौए क्यों मँडरा रहे हैं।'' शिव जी जाना नहीं चाहते थे, पर पार्वती जी हठपूर्वक पहुँच गयीं। मृतक को पड़ा देखकर वे वहीं खड़ी हो गयीं। उसके सब अंग थे, पर एक उंगली न थी। पार्वती जी ने शिव जी से कहा — ''महाराज, ये कोई राही है, इसे जीवित कर दीजिए।'' शिव जी उसकी उंगली की तलाश योगबल से लगायी और उसी बहन के घर भिक्षुक के वेश में जाकर भिक्षा माँगी। जब बहन भिक्षा लेने घर में गयी, तब शिव जी उंगली उठाकर चल दिये। बहन भिक्षा लेकर आयी, तो भिक्षुक को न पाकर चिंतित हुई। कुछ देर बाद उंगली का ध्यान आया, डलिया में उंगली न पाकर सोचने लगी, हो न हो वही भिक्षुक उठा ले गया है। दोपहर हो चली थी, वह चिंतित बैठी थी कि भाई आता दिखाई दिया, उसे बिठाकर देवरानी, जेठानी से पूछने लगी — ''प्यारा भाई आवे, तो उसे क्या खिलाऊँ ?'' उन लोगों ने हँसी में कह दिया, ''घी में चावल बनाकर खिला।'' उसने आँच जलाकर घी में चावल डालकर चढ़ा दिये। कुछ देर बाद भाई आया। भाई को भोजन किये दो दिन हो गये थे। उसने बहन से कहा — ''मुझे बड़ी भूख लग रही है।'' बहन ने कहा — ''भाई चावल चढ़ाये हैं, पर पकते ही नहीं।'' भाई कहने लगा — ''कैसे बनाये जो पकते ही नहीं ?'' ''भैया घी में चढ़ाये हैं।'' यह सुन भाई ने कहा — ''वाह री ! कहीं घी में चावल पकते हैं, उन्हें पानी में चढ़ा।'' घी से निकालकर तब उसने पानी में चावल चढ़ाये, जैसे–तैसे जले–भुने चावल पके। भाई ने भोजन किया। रात हो गयी थी, सब लोग खा–पीकर सो गये। बहुत तड़के बहन उठी, भाई के लिए लड्डू बनाने को आटा पीसने लगी। एक साँप चक्की में सो रहा था। वह पिस गया, अंधेरे में ही उसने लड्डू बनाये और एक कपड़े में थोड़े लड्डू बाँधकर भाई को बड़े सवेरे देकर विदा किया। दिन निकला, बच्चे जागे, पूछने लगे — ''माँ, मामा के लिए क्या बनाया; हमें भी दें।'' उन्हें लड्डू देने लगी, तो देखा सब लड्डू लाल–लाल थे। जाकर उसने चक्की देखी, साँप पिसने से लाल हो गयी थी। व्याकुल होकर वह भाई को ढूँढ़ने लगी। जंगल में एक पेड़ के नीचे भाई को सोता पाया। जगाकर कहने लगी — ''भाई, तूने लड्डू खाया तो नहीं है, चक्की में साँप पिस गया था।'' भाई ने कहा — ''बहन, तू मेरी कहाँ–कहाँ रक्षा करेगी।'' यह कहकर उसने राह के सब वृत्तांत सुनाया।

सब सुनकर वह भाई को वापस घर लिवा ले गयी। ठगों के लिए धन, साँप के लिए दूध, बाघ के लिए माँस, नदी के लिए नारियल तथा चुँदड़ी लेकर भाई के साथ चली। सबों को भेंट–उपहार देकर संतुष्ट किया, भाई को कुशल घर पहुँचाकर वह लौट आयी। इसीलिए इस दिन यदि भाई–बहन दूर–दूर रहते हों, तो बहनें नारियल के तिलक कर लेती हैं। इस दिन के अगले दिन छठ को चक्की से पिसा आटा नहीं खाया जाता है।

२१—राधा अष्टमी

यह भादों मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी को होती है। इस दिन श्री राधिका जी का जन्म हुआ था। अतः राधा जी का शोडषोपचार से पूजन करके भजन–कीर्तन किया जाता है। इसी अष्टमी को पुत्र की शुभकामना से महालक्ष्मी व्रत भी किया जाता है। स्नान आदि से निवृत्त होकर पान के पत्ते पर लक्ष्मी जी की प्रतिमा बनाकर पट्टे पर रखें और उसके पास कच्चे सूत के १६ तार का डोरा लपेटकर उसमें १६ गाँठें लगावें। प्रत्येक गाँठ की, 'लक्ष्म्यै नमः' कहकर लाल चंदन से पूजा करें और फूल चढ़ायें। १६ दिन तक नित्य लक्ष्मी जी की प्रतिमा की पूजा की जाती है। रोज १६ दूब–पल्लव, १६ अक्षत हाथ में लेकर कथा सुनी जाती है। इस प्रकार क्वार मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को पूजा समाप्त होती है। पूजा समाप्त करके भोजन किया जाता है।

कहानी –

अमोती दमोती पटनपुर की रानी, मगरसेन राजा कहें कहानी,
हमसे कहते, तुमसे कहते, सुनो हो लक्ष्मी महारानी, १६ बोल की कहानी।

इस दिन मिट्टी के हाथी की पूजा भी की जाती है, उस पर लक्ष्मी जी की प्रतिमा को रखकर विसर्जन किया जाता है।

२२—अनंत चौदस

भादों मास की शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी (चौदस) को यह व्रत किया जाता है। इसमें अनंत भगवान की पूजा होती है। कच्चे सूत के १४ तार पूरकर केसर से रंगकर अनंत बनाते हैं। हवन करके पुरुष दाहिने हाथ में और स्त्रियाँ बायें हाथ में यह अनंत बाँधते हैं। भोजन एक बार ही और अलोना किया जाता है। इस व्रत के विषय में श्रीकृष्ण जी ने युधिष्ठिर को बताया था, जिसे करके उन्होंने अपना राज–पाट वापस पाया और कष्ट से मुक्त हुए। यह पूजा स्त्री–पुरुष सबको करनी चाहिए।

अन्तर्कथा – सतयुग में सुमंत नाम के एक ब्राह्मण थे। उनकी पत्नी दीक्षा भृगु जी की कन्या थी। उनके एक कन्या हुई, जिसका नाम शीला रखा गया। छोटी अवस्था में शीला की माँ मर गयी। ऋषि ने दूसरा विवाह कर लिया। शीला जब बड़ी हुई, तो कौण्डिल्य नामक ऋषि से उसका विवाह हुआ। विमाता ने दहेज में कन्या को कुछ भी धन–धान्य न दिया और उसे विदा कर दिया। राह में, यमुना किनारे स्नान करने के लिए ऋषि ने रथ रोका, तो शीला भी नदी तट पर स्नान करने गयी। वहाँ देखा कि अनेक स्त्रियाँ कुशा की नागशय्या पर जनार्दन भगवान की प्रतिमा स्थापित करके पूजा कर रही हैं। उन स्त्रियों ने केसर में रंगकर डोरा हाथ में बाँधा और आरती कर भगवान की प्रार्थना की, ब्राह्मण को भोजन कराया और स्वयं भी प्रसाद लिया। शीला ने भी उनके साथ पूजा करने अनंत बाँधा। राह के लिए जो कुछ भोजन लायी थी उसमें से थोड़ा ब्राह्मण को दिया, बचा हुआ पति को खिलाकर स्वयं प्रसाद पाया। इस व्रत के प्रभाव से उसके पास धन–धान्य की कमी न रही। एक दिन कौण्डिल्य ऋषि ने शीला के हाथ में सूत का डोरा बँधा देखा तो पूछने लगे कि कैसा डोरा बाँधे हो। शीला ने वही यमुना–तट पर डोरे से सम्बन्धित पूजन की बात बतायीं। ऋषि ने डोरा तोड़कर अग्नि में डाल दिया। शीला ने उसे झट निकालकर दूध से धोकर रख लिया। इस तिरस्कार से अनंत भगवान कुपित हो गये। शीला के घर में आग लग गयी, सब कुछ नष्ट हो गया। ऋषि बहुत दुखित हुए। शीला ने कहा – ''आपने अनंत भगवान का निरादर किया, इसी से यह अनिष्ट हुआ है।'' ऋषि घर से निकलकर जंगल–जंगल घूमकर अनंत भगवान को ढूँढ़ने लगे; परन्तु अनंत भगवान को कहीं न पाकर दुःखी हो वे फाँसी लगाकर मरने को तत्पर हो गये, तो उसी समय ब्राह्मण के वेश में भगवान ने उन्हें दर्शन दिया और अपने साथ एक गुफा में ले गये। वहाँ ऋषि ने भगवान को दिव्य आसन पर बैठे देखा। अनेक मनुष्य अनंत भगवान का पूजन कर रहे थे। कौण्डिल्य ने भी भगवान को प्रणाम किया, अपना अपराध स्वीकार किया कि मैंने शीला का डोरा तोड़कर आपका निरादर किया है और प्रार्थना की कि आप मेरा अपराध क्षमा करें।

वहाँ उपस्थित साथी ब्राह्मण कहने लगे कि तुम १४ साल तक अनंत भगवान का व्रत और पूजन करो। तो तुम्हारे सब कष्ट दूर हो जायेंगे। देखते ही देखते वहाँ का दृश्य अंतर्ध्यान हो गया। कौण्डिल्य जिस रास्ते आये थे

उसी से लौट पड़े। अपने घर पर आकर १४ वर्ष तक पति–पत्नी दोनों ने अनंत भगवान का व्रत–पूजन किया। उनका सम्पूर्ण दुःख दूर हो गया और अंत समय वे वैकुण्ठ लोक को गये।

२३—पितरपक्ष

भादों मास की शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी से पितरपक्ष आरम्भ होता है। इस तिथि से अश्विन (क्वार) मास की अमावस्या तक के १६ दिन पितरों के होते हैं। कहते हैं कि सूर्य की परिक्रमा करती हुई पृथ्वी क्वार माह के कृष्ण पक्ष में पितृलोक के निकट पहुँचती है। अतः पितृलोक से आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। इस समय किया गया श्राद्ध व तर्पण सीधे पितरों को पहुँचता है। इस समय सूर्य कन्या राशि पर होते हैं इसलिए इस पक्ष को कनागत (कन्या + आगत) भी कहते हैं। शास्त्रों में देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण–ये तीन ऋण मनुष्य पर बताये गये हैं। देवपूजन करके देवताओं का, श्राद्ध–तर्पण करके पितरों का तथा ऋषि–आज्ञा के अनुसार नित्यकर्म करके, इन तीन ऋणों से मनुष्य का उद्धार होता है। देवताओं का चावल से, ऋषियों का जौ से और पितरों का काले तिल से तर्पण किया जाता है। फूल भी ले लेना चाहिए। श्राद्ध कार्यों से निवृत्त होने में अधिक परिश्रम या अधिक धन की आवश्यकता नहीं होती है। यथोचित रूप से कार्य सम्पन्न करें, तो १¹⁄₂ घंटे के समय में सब कार्य पूर्ण हो सकते हैं। पितरपक्ष में जिस तिथि को हमारे बड़े–बूढ़े मरे हों उस तिथि को श्राद्ध–तर्पण करके जल दें तथा ब्राह्मण को भोजन कराके दक्षिणा दें। यह कार्य मध्याह्न काल में करना चाहिए। यदि किसी कारणवश पूर्वजों की मरण–तिथि न स्मरण रहे, तो स्त्रियों का श्राद्ध नवमी को तथा पुरुषों का श्राद्ध अमावस्या को कर देना चाहिए।

२४—शारदीय नवरात्र

क्वार मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (पड़वा) से नवरात्र आरम्भ होते हैं। एक दिन पहले यानि अमावस्या की शाम को कुमारी पूजन किया जाता है। १० वर्ष से कम अवस्था वाली कन्या का पूजन कर उसे हलुआ या चूरमा खिलाया जाता है।

प्रतिपदा (पड़वा) को सिर से स्नान करके स्त्री–पुरुष शुद्ध हों तथा पूजन के स्थान को साफ करें। ताँबा या मिट्टी का कलश धोकर भरें और उस पर लाल कपड़े में नारियल एक जोड़ा कलावा से लपेटकर रखें। घट

स्थापित करने के बाद देवी जी की स्थापना करें और धूप, दीप, जल, फूल, बताशा से पूजन करके आरती करें। फिर मिट्टी की चौड़े मुँह की हाँडी या मिट्टी के कुँड़ा में जौ बोयें तथा इसे देवी जी के कलश के समीप रखें। दुर्गा सप्तशती का पाठ स्वयं प्रतिदिन करें या पुरोहित से करायें। अष्टमी को हवन करके नवमी को कन्याएँ खिलायी जाती हैं।

अन्तर्कथा – शुम्भ–निशुम्भ और महिषासुर आदिक दैत्य अधिक बली हो गये तथा वे देवताओं को सताने लगे। तब देवताओं ने देवी शक्ति की उपासना की। देवी प्रसन्न हो प्रकट हुईं और कहा कि मैं तुम्हारा कष्ट दूर करूँगी। तत्पश्चात् देवी ने दुर्गा का विकराल रूप धारण करके देवताओं के शत्रु पापी दैत्यों का संहार किया और देवताओं को निर्भय किया। इसी से इन दिनों देवी की पूजा की जाती है।

२५—विजयदशमी या दशहरा

क्वार मास के शुक्ल पक्ष की दशमी को दशहरा मनाया जाता है। यह दिन दस कामनाओं की पूर्ति करने वाला है। इस दिन यदि श्रवण नक्षत्र भी हो, तो अधिक शुभ माना जाता है। इस दिन शमी वृक्ष का पूजन किया जाता है और अस्त्र–शस्त्र की पूजा होती है। यह त्योहार विशेषकर क्षत्रियों का है।

आँगन को धोकर, लीपकर, चौक पूरकर आटा, रोली, हल्दी से शोभित करें। चौक पर दो पंक्तियों में दस–दस जोड़े छोटे–छोटे कंडे बनाकर रखे जाते हैं। बीच में एक पटरे पर गोबर की ४ डिबियाएँ बनाकर एक में नया चावल, दूसरी में नया मूँग, तीसरी में चाँदी या चाँदी का रुपया, चौथी में दही रखा जाता है। गोबर की इन डिबियों को गोबर से बने ढक्कनों से ढक देते हैं। यदि किसी स्थान पर गोबर न मिले, तो इन्हें आटे से बना लें। चौक पर अस्त्र–शस्त्र रखकर परिवार के पुरुष व लड़के इन सबकी धूप, दीप, फूल, रोली, बताशा से पूजा करके फल चढ़ाते हैं। नयी कलम–दवात से कागज पर श्रीगणेशाय नमः लिखकर अनाज, घी, सोना, चाँदी आदि का उस समय का बाजार भाव लिखा जाता है। सब पूजा करने वाले अपने हस्ताक्षर उस कागज पर करते हैं। प्रसाद–रूप में फल वितरण करते हैं। मुख्य द्वार पर शमी के पत्तों की बनी वंदनवार बाँधी जाती है। नये जौ के पौधे (जवार) कान पर रखे जाते हैं।

लोककथा है कि अर्जुन ने पाण्डवों के अज्ञातवास में शमी वृक्ष पर अपने

धनुष–बाण आदि अस्त्र छिपाकर रखे थे। इसी दिन श्रीरामचन्द्र जी ने लंका विजय के लिए आक्रमण की तैयारी भी की थी। भृगुवंशी वीर शिरोमणि सम्राट **श्री हेमचन्द्र जी** का जन्म–दिवस भी दशहरे को ही मनाया जाता है।

२६–करवा चौथ

कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चौथ को करवा चौथ कहते हैं। यह व्रत सुहाग का है, अतः सौभाग्यवती स्त्रियाँ ही पति की शुभ–मंगल कामना के लिए इस व्रत को करती हैं। सौभाग्वती स्त्रियाँ एक दिन पहले सिर से स्नान करके हाथों में मेंहदी रचाती हैं। चौथ को श्रृंगारयुक्त होकर व्रत रखती हैं। शाम को सूर्यास्त से पहले आँगन या छत के एक स्थान को गोबर या मिट्टी से चौकोर लीपकर हल्दी की रेखा चारों ओर बनाकर बीच में हल्दी से सथिया बनाया जाता है। उस पर कटोरा में गौर स्थापित करते हैं फिर गौर को जल से स्नान कराके हल्दी का टीका लगाकर अक्षत चढ़ाये जाते हैं।

करवा धोकर और करवे का ऊपरी किनारा हल्दी से पीला करके उस पर कलावा के तार बाँधे जाते हैं। उसमें १४ पुए या गुलगुले और कुछ द्रव्य डालकर उसी चौक पर रखकर करवा की पूजा होती है।

कुटुम्ब की स्त्रियाँ एक साथ बैठकर पूजा करती हैं। करवा काढ़कर दो स्त्रियाँ आपस में यह कहते हुए करवा बदलती हैं –

''करवा ले री करवा ले, सदा सोहागिन करवा ले।''
''करवा ले री करवा ले, सात भाई की बहन करवा ले।''
''करवा ले री करवा ले, सात पूत की माँ करवा ले।''

यदि पूजा करने वाली स्त्री अकेली हो, तो वह २ करवा सँजो लेती है और गौर के आगे रखकर गौर से करवा बदल लेती है। पूजा का करवा ननद को दिया जाता है। इस दिन सूर्य की पूजा करके अर्घ्य दिया जाता है। पूजा के बाद बड़ी–बूढ़ियों जैसे सास, जेठानी, बड़ी ननद आदि का अपने आँचल से पैर छूकर उनसे सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद प्राप्त किया जाता है। रात को चंद्रमा के उदय होने पर उसे अर्घ्य देकर अक्षत–हल्दी चढ़ाई जाती है। गुलगुलों से भोग लगाया जाता है। तत्पश्चात् भोजन किया जाता है।

चौथ की कहानी – प्राचीन काल में एक ब्राह्मण के सात पुत्र और कन्या थी। कन्या का नाम बीरमती था। विवाह हो जाने के बाद मायके में

उसने भी अपनी भाभियों के साथ व्रत रखा, पर अन्त तक उसे निभा न पायी। वह भूख व प्यास से व्याकुल हो गयी। भाइयों ने भूख से व्याकुल बहन को देखकर माता से पूछा कि बहन कब खाना खायेगी। माँ ने बताया कि चंद्रमा निकलने पर पूजा करके खायेगी। दिन छिपते ही सब भाई एक ऊँचे टीले पर चढ़ गये। दिया जलाकर उसपर चलनी ढक दी और बहन को दिखाया कि देख, चंद्रमा निकल आया है, चल, पूजा कर ले। पर उसकी भाभियों ने कहा कि अभी चंद्रमा कैसे निकल सकता है। पर बहन ने भाई की बात सत्य मानकर पूजा कर ली और भाइयों द्वारा लाया सामान खा लिया। अचानक उसकी ससुराल से नाई आ गया और पति की बीमारी का हाल सुनाया। उसी नाई के साथ वह ससुराल चली गयी। चलते समय माँ ने समझा दिया कि ससुराल की राह में मिलने वाली सभी स्त्रियों के पैर छूते जाना। चलते–चलते चंद्रमा के उदय होने का समय हो गया। साक्षात् चौथ देवी का दर्शन हुआ। ज्यों ही वह देवी के पैर छूने चली, तो उन्होंने 'चल अभागिन दूर हट' कहकर उसे पैर न छूने दिये। अनुनय–विनय करने पर देवी ने बताया, ''तूने व्रत खंडित किया है। तेरा पति मर गया है। तू आशीर्वाद की अधिकारिणी नहीं है।'' कन्या को बड़ा दुःख हुआ, उसने घर पहुँचकर सब हाल देखा। उसने घर वालों से जिद् की कि मैं मृतक पति का दाहकर्म न करने दूँगी और एक झोपड़ी डालकर लाश को उसी में रखवाकर सेवा करने लगी। हर मास की चौथ को व्रत करती और चौथ देवी की पूजा करके आशीर्वाद चाहती; पर किसी भी चौथ देवी ने उसे आशीष न दी। सभी से तिरस्कृत होकर भी वह व्रत करती ही रही। जब कार्तिक की चौथ आयी, तो पूजा–वन्दना करके उसने चौथ देवी के पैर पकड़ लिये और बोली – ''माँ, मुझे क्षमा करो, मैंने अंजाने में यह अपराध किया है, अब मुझे आशीर्वाद देकर उबारो।'' जब उसने किसी तरह पैर न छोड़े तो देवी ने कहा – ''चिर सौभाग्यवती हो।'' तब उस स्त्री ने करवा पूजकर करवा का जल अपने मृतक पति पर छिड़का तो वह ऐसे उठ बैठा जैसे सोता हुआ प्राणी जाग जाये। पत्नी ने उसे स्नान करवाया फिर बैठकर प्रसन्नतापूर्वक पति से बातचीत करने लगी। उसकी ननद भोजन लेकर आयी। झोपड़ी में बातचीत के शब्द सुनकर वह उलटे पैर घर लौट गई, घर वालों को बुलाकर लायी और द्वार खुलवाये। मृत पुरुष को जीवित देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। पुत्र व पुत्रवधू को लेकर सब घर गये। खूब आनंद मनाया गया। इसी

व्रत को श्रीकृष्ण जी ने पाण्डवों के कल्याण के लिए द्रौपदी से करवाया था। इसके करने से उन्हें राज–पाट, सुख–सम्मान सब कुछ मिल गया था।

२७—अहोई अष्टमी

कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को यह व्रत संतान की शुभकामना के लिए किया जाता है। पुत्रवती स्त्रियाँ यह व्रत करती हैं। दीवार पर गेरू से या पाँच रंगों से अहोई रखी जाती है (चित्र पृष्ठ ७६)। किसी–किसी परिवार में हाँडी के ऊपर ही सात बच्चों सहित साही का चित्र बनाया जाता है।

एक हाँडी में पानी भरकर और एक हाँडी के किनारे पीले करके उस पर कलावा बाँधा जाता है तथा हाँडी को बायीं ओर रखा जाता है। दहिनी ओर एक करवा में पानी भरकर एक शकोरे में तेल डालकर उस पर लम्बी बत्ती का दिया जलाया जाता है। उबाले हुए गेहूँ और चने का भोग लगता है। आटे की छोटी–छोटी १४ पूरियों में हलुआ या कुछ द्रव्य रखकर बायना काढ़कर घर की बड़ी–बूढ़ी महिलाओं को दिया जाता है।

प्रत्येक परिवार में चाँदी के चौकोर टुकड़े पर साही व सात बच्चों का चित्र अंकित करके उसकी माला में चाँदी के बने दाने पिरोये जाते हैं। इस माला में प्रत्येक संतान के जन्म पर तथा उसके विवाह पर चाँदी के दो–दो दाने डाले जाते हैं। यह माला सुरक्षित रखी जाती है। अहोई अष्टमी के दिन फिर से नये कलावा के जोड़े में माला पिरोई जाती है और हाँडी व करवा के ऊपर पहना दी जाती है। पूजा कर चुकने के बाद घर की बड़ी महिला उसे अपने गले में डाल लेती है। प्रसाद–स्वरूप आठ–आठ चने उठाकर अपने बच्चों को खिलाये जाते हैं। तारा निकल आने पर अर्घ्य देकर भोजन किया जाता है। हलुआ, पूरी अथवा कच्चा खाना, जैसी जिस परिवार की प्रथा हो, बनाया और खाया जाता है। किसी–किसी परिवार में दोपहर को ही साही पूजा का चलन है। पर अधिकतर लोगों के यहाँ रात में तारा–उदय होने पर ही पूजा होती है।

अन्तर्कथा – एक स्त्री के सात बेटे थे। दीवाली पर घर लीपने–पोतने के लिए वह तालाब के तट पर मिट्टी खोदने गयी, तो खोदते समय कुदाली लग जाने से साही के बच्चे कट गये। उस पाप से उसके सब लड़के मर गये। पास–पड़ोस की बड़ी–बूढ़ी स्त्रियों ने बताया कि तूने जहाँ से मिट्टी

खोदी थी वहीं जाकर उस साही को प्रसन्न कर, भगवान चाहेगा, तो तेरे फिर बेटे हो जायेंगे। उनकी बात मानकर उस स्त्री ने गेहूँ–चना उबाले और उसी स्थान पर उन्हें बिखेर कर बैठी रही। साही और उसके बच्चों ने पेटभर भोजन किया। साही ने संतुष्ट होकर आशीर्वाद दिया कि जैसे तूने हमें और हमारे बच्चों को तृप्त किया वैसे ही तू भी सुखी हो। कुछ समय उपरान्त उसके लड़का हो गया। वह हर साल अष्टमी के दिन वहीं जाकर पूजा करती रही। क्रमशः फिर से उसके सात पुत्र हो गये, तब से इस पूजा की रीति प्रचलित हो गयी।

२८—धनतेरस

कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की तेरस को धनतेरस कहते हैं। समुद्र–मंथन होने पर भगवान धन्वन्तरि लक्ष्मी जी के साथ इसी दिन निकले थे। इसी दिन यमराज की भी पूजा की जाती है। शाम को अपने द्वार के समीप मिट्टी की ढेरी पर मिट्टी के दिया में तेल डालकर दीपक जलाया जाता है और परिवार के पुरुष पूजा करते हैं। यह यमराज की पूजा है। दीवड़ा नामक पकवान तेल में तलकर गुड़ की पाग लगाकर सब पूजा करने वाले आठ–आठ दीवड़े दीपक के पास चढ़ाते हैं। ताँबे का एक पैसा (आजकल १ रु० का सिक्का) हल्दी से पीला करके व एक दीवड़ा दीपक में डालते हैं। यह पूजा दिन छिपने के बाद की जाती है। पूजा में चढ़ाया गया सामान ब्राह्मण को देते हैं। रात भर दीपक जलना चाहिए। इस दिन नये बर्तन खरीदने की प्रथा है। लोहे या स्टील के बर्तन नहीं खरीदना चाहिए।

अन्तर्कथा – एक समय यमराज ने अपने दूतों से पूछा – ''जब तुम किसी प्राणी के प्राण हरण करने जाते हो, तो क्या तुम्हें भी दया आती है या नहीं ?'' दूतों ने कहा – ''महाराज ! हमें प्राण–हरण जैसा कठोर कार्य करते हुए भी कभी–कभी दया आ ही जाती है। सुनिये, एक समय की बात है कि हंस नाम का राजा शिकार को गया। वह राह भूलकर दूसरे राजा के राज्य में पहुँच गया। उस राजा ने उसका बहुत आदर–सत्कार किया। सवेरा होने पर वह अपने राज्य को वापिस लौटा। वापिस आने पर उसने पुत्र के उत्पन्न होने का समाचार सुना। बड़ी धूमधाम से छठी–पूजन हुआ। योग्य पंडितों ने बताया कि यह बालक विवाह के १० दिन अन्दर मर जायेगा। तब राजा हंस ने ऐसा अभेद्य किला बनवाया जहाँ किसी की पहुँच

न थी, उसमें बालक को रखा गया। युवा होने पर उसके विवाह की तैयारी हुई। धूमधाम से उसका विवाह हुआ। चौथे दिन हमने उसके प्राण हरण कर लिये। मांगलिक कार्यों में ऐसी घटना हो जाने से सारा परिवार दुखित हो विलाप करने लगा। उनका विलाप सुनकर हमारा भी धैर्य छूटने लगा। हम भी फूट–फूटकर रोये। हे महाराज ! यदि कोई ऐसा उपाय हो कि असमय मृत्यु न हो, तो हमें बतायें।'' तब यमराज ने धनतेरस की पूजा का तथा संध्या के समय दीपदान का विधान बताया।

२६—नरक चौदस

कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरक चौदस कहते हैं। यही छोटी दीवाली भी कही जाती है।

सूर्योदय के पहले तेल–उबटन लगाकर सब स्त्री–पुरुषों को चौकी पर बैठकर (चौकी के नीचे दिया जलाकर रख लें) स्नान करना चाहिए। स्नान के बाद हल्दी का टीका लगाना चाहिए और तेरस के दिन बने दीवड़े खाने चाहिए। शाम को तेल के ११ या १४ दीपक जलाकर थाली में रखकर काढ़ने चाहिए और देव–स्थान, चौराहा, देवी के मंदिर, शिवालय, कुआँ, पीपल वृक्ष, तुलसी, श्मशान, द्वार पर तथा आँगन में रखने चाहिए। बचे हुए दीपक मुख्य द्वार पर जला दें।

अन्तर्कथा — भगवान ने वामन रूप रखकर राजा बलि से इन्हीं तीन दिनों में पृथ्वी का दान माँगा था — धनतेरस, चौदस और अमावस्या को। जब भगवान पृथ्वी नाप चुके, तो उन्होंने प्रसन्न होकर बलि से कहा —''जो इच्छा हो माँगो।'' राजा बलि ने कहा, ''मुझे कुछ पाने की चाह नहीं है। संसारी मनुष्यों के निमित्त यह वरदान चाहता हूँ जो यम–पूजा, दीप–दान और दीप–उत्सव करे उस पर सदा लक्ष्मी प्रसन्न रहें।'' भगवान ने कहा, ''ऐसा ही होगा।'' तभी से यह परम्परा प्रचलित है।

भार्गवों में दीवाली पर पकवान बनाने की प्रथा है। दो–चार दिन पहले से महिलाएँ तरह–तरह के पकवान चौदस तक बना लेती हैं। दीवाली को सब पकवान एकत्र करके थाल में सजाकर लक्ष्मी व भगवान का भोग लगाया जाता है। खोये के लड्डू अवश्य बनाने चाहिए क्योंकि लक्ष्मी जी का भोग खोया की बनी मिठाई से लगाया जाता है।

३०—दीपावली

कार्तिक मास कृष्ण पक्ष अमावस्या को दीपावली होती है। यह बहुत प्राचीन काल से होती आ रही है। दीपावली की रात को लक्ष्मी–पूजन की परम्परा क्यों चली, इसके पीछे पौराणिक कथा का आधार है। कहते हैं कि राजा बलि ने अपनी शक्ति से सब देवी–देवताओं को जीतकर उन्हें तथा लक्ष्मी जी को कैद कर लिया था। तब भगवान विष्णु जी ने बावन अंगुल का रूप रखकर राजा बलि से तीन पग पृथ्वी माँगी। बलि ने कहा — ''इतने से क्या होगा और कुछ माँग लो।'' वामन भगवान ने कहा — ''मुझे ध्यान–पूजा के लिए इतनी ही भूमि की आवश्यकता है।'' बलि द्वारा दान का संकल्प कर देने पर भगवान ने विराट् रूप धारण किया और विराट् रूप से तीन पग में तीन लोक नाप लिए, फिर दक्षिणा माँगी। बलि द्वारा दक्षिणा न दे सकने पर भगवान ने बलि को बाँध लिया और पाताल को भेज दिया। इस दिन सभी देवता और लक्ष्मी जी बंधनमुक्त हुए। सबने मिलकर देवताओं सहित लक्ष्मी जी का पूजन किया व खुशी मनायी। तभी से यह परिपाटी प्रचलित हुई।

इस दिन लक्ष्मी जी तथा सब देवताओं की पूजा बड़े समारोह से की जाती है। दिन भर व्रत रखकर सायंकाल सारे घर को स्वच्छ करके पूजन की तैयारी की जाती है। शाम को २२ दिये जलाकर काढ़े जाते हैं, इनमें ५ घी के जलाने चाहिए — गणेश, शिव, विष्णु, लक्ष्मी और तुलसी के। बाकी दिये चौराहे, कुआँ या जल रखने स्थान पर, घर के द्वार, आँगन आदि स्थानों पर जलाकर रख दें। विभिन्न प्रकार के भोजन, खोया की मिठाई, फल, बताशा से भोग लगता है। सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा होती है। तत्पश्चात् और सब देवताओं की फिर लक्ष्मी जी की पूजा की जाती है। लक्ष्मी जी के साथ एक बड़े कटोरा या शकोरा में घी भर कर उसमें कमलबत्ती रखकर दीपक रात भर जलाकर रखा जाता है। लक्ष्मी जी को पंचामृत से स्नान कराया जाता है। फूल–फल, धान की खील, बताशा चढ़ाये जाते हैं, कपूर जलाकर आरती होती है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ पूज्य, मान्यजनों को कटोरी में ''फल नामक पकवान'' तथा द्रव्य रखकर बायना देती हैं। लड़के चौपड़ा में लड्डू भरते हैं तथा लड़कियाँ हटड़ी (मिट्टी का बना घर) में खील व मिठाई भरती हैं।

दीपक सजाकर घर भर में रात में रोशनी की जाती है। इस रात्रि को दीपों की जलती हुई कतार बड़ी सुन्दर लगती है। बच्चे फुलझड़ी व पटाखे छुड़ाकर खुश होते हैं।

चरणामृत लेने के बाद भोजन किया जाता है। इस दिन रात्रि को लक्ष्मी सूक्त का अखण्ड पाठ करते हुए जागरण करें। दूसरे दिन सबेरा होने से पहले घर झाड़–बटोर कर सारे कूड़े को एक सूप में रखकर घर के बाहर कर देते हैं। उस कूड़े पर दीपक जला देते हैं। सूप को उलट कर गन्ना के एक टुकड़े से बजाकर घर में लौटते हैं। ''दूर हटी आपदा, घर आयी सम्पदा'' कहकर सूप टाँग देते हैं। स्नान करके लक्ष्मी जी का विसर्जन होता है। पूजा का थाल उठाकर रख दिया जाता है और पूजाघर के द्वार पर पिठावा से सथिया बनाये जाते हैं।

कहानी – लक्ष्मी जी की पूजा करने के बाद यह कहानी कही जाती है। एक राजा थे उनकी रानी ने स्नान करते समय अपना नौलखा हार उतारकर खुले में रख दिया था जिसे एक चील उठाकर ले उड़ी। राजा ने सिपाहियों को हार ढूँढ़ने के लिए चारों ओर भेजा।

उसी देश में एक परिवार में कई बहुएँ थीं। पर बड़ी बहू चतुर थी, उसने घर के लोगों से कह रखा था कि जब बाहर से आवें, तो घर में कुछ न कुछ अवश्य लेकर आयें। उसके आदेश के कारण मिट्टी, पत्थर, लकड़ी, ईंट जो जिसे पड़ा मिलता, ले आते। बहू उन चीजों को यथास्थान रख देती। एक दिन एक देवर ने मरा साँप देखा, तो वह उसे उठा लाया और बोला – ''लो भाभी, यह लाया हूँ।'' बहू ने कहा – ''छप्पर पर डाल दो।'' संयोगवश उसी मकान के ऊपर से रानी का हार लेकर चील उड़ती हुई निकली। छप्पर पर पड़े साँप पर उसकी निगाह पड़ी और वह हार उसी जगह डालकर साँप उठा ले गयी।

बहू घर का आँगन बटोर रही थी। उसने छप्पर पर गिरते हुए हार को देख लिया। वह ऊपर चढ़कर हार उठा लायी। शाम होते–होते शहर में रानी के हार खोने का ढिंढोरा पिट गया कि जो कोई हार ढूँढ़कर लायेगा, मुँहमाँगा इनाम पायेगा। वह बहू देवर को साथ लेकर राजमहल में गयी और रानी को हार दिया। रानी बहुत प्रसन्न हुई। उससे ईनाम माँगने को कहा, तो बहू ने कहा – ''कल अमावस्या के दिन किसी के घर में दिया न जले, सिर्फ मेरे ही घर में जले।'' रानी ने कहा – ''ये तो कुछ ईनाम न हुआ।'' पर बहू ने कुछ और न माँगा। राजा की आज्ञा के कारण उस दिन किसी के घर दिया न जला। बहू ने खूब रोशनी की। रात को लक्ष्मी जी का विधिवत् पूजन किया। लक्ष्मी जी जब रात्रि को निकलीं, तो केवल इसी के घर

रोशनी देखकर वहीं विराजमान हो गयीं। बहू का परिवार धन–धान्य से सम्पन्न हो गया।

३१–गोबरधन पूजा (अन्नकूट)

वैदिक काल में इन्द्र सर्वश्रेष्ठ देवता थे। ऐसी मान्यता थी कि उनकी ही कृपा से वर्षा होती है जिसके कारण अन्न पैदा होता है। द्वापर युग में भगवान कृष्ण के समय में भी ब्रज में लोग पड़वा के दिन इंद्र की पूजा करते थे। कृष्ण जी ने यह पूजा बन्द करा दी और ब्रज में स्थित गोबरधन पहाड़ पर गये। वहाँ साक्षात् रूप से कृष्ण जी ने गोबरधन का रूप रखकर भोजन कर सबको संतुष्ट किया। इससे इंद्र रुष्ट हो गये और ब्रज में इतनी वर्षा की कि चारों ओर पानी–ही–पानी हो गया। कृष्ण जी ने अपने हाथ के सहारे गोबरधन पहाड़ को उठा लिया। उसके नीचे सब गोप–गोपियों व गाय–बछड़ों को खड़ा करके ब्रज की रक्षा की। इंद्र का अभिमान टूट गया, उन्हें हार माननी पड़ी। वर्षा समाप्त हो जाने पर सबको लेकर कृष्ण ब्रज में लौटे। तब से गोबरधन की यह पूजा होने लगी। इसी उपलक्ष्य में पड़वा को छप्पन प्रकार के भोजन बनाकर भगवान का भोग लगाया जाता है। आरती, भजन, कीर्तन करके लोग उत्सव मनाते हैं। पहाड़ पर गो–बछड़े जाने से गोबर ही गोबर हो गया था – इसलिए गोबर की आकृति वाला गोबरधन का रूप बनाकर गोधूलि के समय सब स्त्री–पुरुष इसकी पूजा करते हैं, परिक्रमा लगाते हैं। दही, धान की खील व बताश चढ़ाकर रोली–चावल से पूजा करके फूल चढ़ाते हैं। **''मान श्री गंगा श्री हरदेव, गिरवर की परिक्रमा देवो''** कह कर सात परिक्रमायें की जाती हैं। गोबरधन की मूर्ति के पास दही, मथानी आदि भी रखे जाते हैं तथा घी या तेल का दीपक जलाया जाता है।

३२–भैया दोयज या यम द्वितीया

यह कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की दोयज को होती है। इस तिथि को दोपहर से पहले प्रवेश द्वार के पीछे लीप या धोकर दोनों ओर एक–एक मूसल खड़ा करते हैं। फिर भैंस का गोबर, बेर–बबूल और भटकटैया की डाली, ईंट का टुकड़ा या एक–एक दियाली द्वार के दोनों ओर रख देते हैं, मूसल को जल से नहलाकर हल्दी–चावल का टीका करके उसमें कलावा बाँधते हैं। चना, पपड़ी, दीवड़ा, खीलें व बताशा चढ़ाकर मूसल से कंकड़ व काँटों को कूटते हैं। अपने भाइयों का नाम लेकर बहनें कहती हैं – ''मैं अपने भाई के संकट कूटूँ।''

बहनें भाई को भोजन कराती हैं और रोली से टीका करती हैं। भाई को इस दिन बहन का बनाया भोजन करना चाहिए। भाई के साथ भावज और भतीजों को भी खिलाने की प्रथा है। भाई, बहन को द्रव्य देते हैं। इस दिन यमुना नदी में स्नान करने का विशेष महत्त्व है तथा भाई–बहन साथ–साथ स्नान करते हैं।

दोयज की कहानी – सात बहनों का एक दुलारा भाई था। सब बहनों का विवाह हो गया था। जब भाई का विवाह होने को हुआ, तो माँ ने कहा – ''बेटा, तेरी सब बहनें दूर–दूर हैं, छोटी बहन का घर पास है, जा उसे लिवा ला।''

बहन के घर भाई पहुँचा, तो द्वार बन्द करके बहन दोयज की पूजा कर रही थी। पूजा करके द्वार खोलते ही भाई को खड़ा पाया, तो बड़ी प्रसन्न हुई। भाई को बड़े आदर–सत्कार से खिलाया–पिलाया। भाई सुचित्त होकर बैठा, तो कहने लगा – ''बहन, मेरा विवाह है, मैं तुझे लिवाने आया हूँ।''

बहन ने कहा – ''तुम चलो, मैं घर का प्रबन्ध करके आऊँगी।'' वह पति की आज्ञा लेकर भाई के घर चली। राह में उसने एक आदमी को साही के काँटे बटोरते देखा, तो उससे पूछने लगी, ''इसका क्या करोगे।'' उसने बताया, ''इसको पास रखने से विघ्न–बाधा दूर हो जाती हैं।'' बहन ने भी कुछ काँटे माँग लिए। आगे चलकर देखा कि एक मनुष्य दिया जलाकर पूजा कर रहा है और कह रहा है कि सात बहनों का एक ही दुलारा भाई है, उसके विवाह में चार बाधाएँ आने वाली हैं। उसे कोई उन बाधाओं से बचा ले, तो बच सकता है, नहीं तो मर जायेगा। बहन ने जाकर पूछा – ''तुम किसकी बात कर रहे हो। यदि कोई हानि न हो, तो उन बाधाओं के विषय में मुझे बता दो।'' उसने कहा – ''पहली बाधा में द्वार गिरेगा, दूसरी में पेड़ गिरेगा, तीसरी में मंडप से वर को सिंह उठा ले जायेगा। इन तीन से यदि वह बच भी गया, तो सर्प के डसने से उसकी मृत्यु होगी। साही के काँटे इन बाधाओं को रोक सकते हैं।''

वह सोचने लगी, हो न हो, ये तो मेरे भाई के विषय में ही बता रहा है। बस, घर पहुँचते ही वह पागल बन गयी, खूब गाली देती और बकवाद करती। विवाह के घर में यह अपवाद सबको बुरा लग रहा था। लग्न के समय भाई के हाथ लग्न न लेने दी। बहन ने लग्न स्वयं हाथ में लेकर साही का एक काँटा उसमें खोंस दिया। ब्याह के प्रत्येक नेग में स्वयं आगे होकर स्वयं सब नेग करवाती तब भाई के होने देती। बरात चलने की तैयारी हुई तो बहन कहने लगी – ''इस मुए को दरवाजे में से नहीं निकलने दूँगी।'' पागल की जिद् से विवश होकर दूसरा द्वार फोड़ा गया, तब दूल्हा बाहर निकला। उधर मुख्य द्वार टूटकर गिर पड़ा।

उपस्थित जनों ने कहा, ''चलो अच्छा ही हुआ। अगर पगली की बात न मानते तो दूल्हे को चोट आ जाती।'' बरात के साथ बहन भी जिद् करके चली। एक पेड़ के नीचे विश्राम करने को बरात ठहरने लगी, वह कहने लगी, ''इस मरे को धूप में खड़ा करो।'' क्या करते, पगली की बात मानी, सब मैदान में बैठ गये। बैठने के साथ ही पेड़ उखड़कर गिर पड़ा, बराती बच गये। बरात जनवासे पहुँची। सबों ने सलाह दी कि इसे सोती छोड़कर ब्याहने जायेंगे। विवाह का समय हुआ, तो सब लोग पगली को सोती छोड़कर चले गये। जैसे ही पगली की आँख खुली भागती हुई वह विवाह–स्थल पर पहुँची। उसी समय मंडप के पास एक सिंह गरजता हुआ आया, पगली ने दौड़कर जौ का एक पूला, साही का काँटा खोंसकर सिंह के मुँह पर फेंका। सिंह डरकर भाग गया। विवाह सकुशल हो गया। वर–वधू घर आये। नेगचार हो चुके, तो रात को वह कहने लगी, मैं तो भाई–भौजाई के पलंग पर सोऊँगी। सबने समझाया, पर पगली किसी की सुनती ही न थी। आखिर भाई ने कहा – कोई हरज नहीं, यह तो कहें वही करो। पलंग पर एक तरफ भाई दूसरी तरफ भौजाई, बीच आप सोई। भाई–भावज को नींद आ गयी। बाहर स्त्रियाँ गा–बजा रहीं थीं। परन्तु वह स्वयं जागती रही। १२ बजे रात को एक सर्प उतरा। पगली ने उसे मारकर कूँड़ा के नीचे दबा दिया और गीत गाती हुई बाहर निकल कर सो रही, वह दोपहर तक सोती ही रही। माँ ने कहा, ''जब से यह आयी है, सबको परेशान कर रखा है। ब्याह हो गया, अब इसे इसके घर पहुँचा दूँगी।'' भाई बाजार से बहन के लिए साड़ी लेकर आया, तब तक वह जाग उठी थी और सबसे हँस–हँस कर बातें कर रही थी। सबने पूछा – ''तुझको क्या हो गया था जो तू दिन–रात गालियाँ बकती थी।'' तब उसने कोठा में कूँड़ा के नीचे रखा मृत सर्प दिखाया और सबको आद्योपांत सारा वृत्तांत कह सुनाया और कहा, ''मैं तो अपने भाई की रक्षा के लिए पागल बन गयी थी।'' भाई ने खूब ले–देकर बहन को विदा किया। वह आनंद से अपने घर गयी। चलते समय बहन ने भाई को रोली का टीका किया।

दूसरी कथा — सूर्य से यम और यमुना नाम के पुत्र व पुत्री थे। दोनों में बड़ा स्नेह था। एक दिन यमुना ने भाई यम को भोजन का निमंत्रण दिया, आदरसहित भाई को बड़े चाव व श्रद्धा से भोजन बनाकर खिलाया और चलते समय उसे टीका लगाया। यमराज ने प्रसन्न होकर उसे धन आदि दिया और कहा, ''बहन कुछ माँगो।'' यमुना बोली, ''भाई, जो कार्तिक महीने में यमुना नदी में स्नान करे वह यमलोक न जाये।'' यम ने कहा — ''यह तो कठिन है।'' तब बहन ने कहा — ''जो पचभीषम नहाये, वह यमलोक न जाये।'' यमराज ने कहा — ''ये भी ज्यादा है, थोड़ा—सा वरदान माँगो, तो मैं दे सकूँगा।'' यमुना ने कहा — ''अच्छा भाई ! जो भाई—बहनें आज की भैया दोयज को मथुरा में यमुना नदी के विश्रांत घाट पर स्नान करें, उन्हें यमलोक न जाना पड़े।'' यमराज ने कहा — ''बहन, तुम्हारी यह बात मैंने मान ली। इस दिन जो भाई अपनी बहन के यहाँ जाकर भोजन करके टीका करवाये, उसको सद्‌गति प्राप्त होगी।'' तब से मथुरा में यमुना नदी के विश्रांत घाट पर भाई—बहन स्नान करते हैं। बहन भाई के तिलक करती है और भाई भेंट—स्वरूप धन—वस्त्र आदि बहन को देता है।

तीसरी कहानी — एक रानी और छोटी जाति की एक स्त्री परस्पर सहेलियाँ थीं। दोनों गर्भवती हुईं। आपस में बात ही बात में कह दिया — ''हम दोनों के यदि लड़का हुआ, तो वे मित्र होकर रहेंगे, यदि लड़की हुई, तो सहेली होकर रहेंगी और यदि लड़का और लड़की हुए, तो उनका आपस में विवाह कर देंगे।'' रानी के बेटी हुई और उसकी सहेली के लड़का हुआ। प्रजा में चर्चा होने लगी थी राजकुमारी छोटी जाति में ब्याही जायेगी। कन्या को यह अपवाद बुरा लगा। वह नीची जाति के पुरुष से विवाह नहीं करना चाहती थी। अतः यह निश्चय हुआ कि यमुना स्नान के समय यदि वह युवक राजकुमारी को ले जा सके, तो पति—पत्नी अन्यथा भाई—बहन का व्यवहार रहेगा। कार्तिक के ५ दिन स्नान के लिए निश्चित हुए।

पहले दिन युवक ने हाथ की उंगली चीरकर मिर्च भर ली और राह में आकर बैठ गया। प्रातःकाल ठंडी हवा चलने के कारण उसे नींद आ गयी। राजकुमारी ने स्नान करके उसके पैर में चंदन लगाकर कहा — ''नहाई मैं आई खड़ी सुखाऊँ केश, ऐड़ी चंदन लगाय के चली आपने देश।''

दूसरा दिन हुआ। उस युवक ने यमुना जाने की राह में आग लगायी

और रात भर बैठा तापता रहा। प्रातःकाल उसे नींद लग गयी। राजकुमारी आयी, स्नान किया और जाते समय उसके घुटने पर चंदन लगाकर कहा — ''आई थी मैं नहाई थी खड़ी सुखाऊँ केश, घुटने चंदन लगाय तू सोया अचेत।''

तीसरा दिन हुआ। युवक ने सोचा, रोज नींद आ जाती है। आज आँख में मिर्च भर लूँ, तो सोऊँगा नहीं। रात भर हाय—हाय करता रहा, सवेरे शीतल हवा से आँख की पीड़ा कम हुई, तो आँख लग गयी। राजकुमारी ने स्नान करके उसकी छाती में चंदन लगाकर कहा — ''आई थी मैं नहाई थी खड़ी सुखाऊँ केश, छाती चंदन लगाय के चली आपने देश।'' जब युवक की आँख खुली, तो निराश होकर लौट गया।

वह चौथी रात रात भर गाता—बजाता रहा। गाते—गाते वह थक गया। सवेरे की ठंडी हवा में बैठे ही बैठे वह सो गया। राजकुमार नहाकर आयी और कहा — ''आई थी मैं नहाई थी खड़ी सुखाऊँ केश, पास में नारियल उस पर चंदन लेप।'' जब उसकी आँख खुली, तो वह बहुत ही दुःखी हुआ।

वह दिन भर सोचता रहा, क्या करूँ, किस प्रकार राजकुमारी को अपना सकूँगा। एकाएक उसने निश्चय किया कि बबूल के काँटे रखकर उसपर बैठूँगा तो नींद न आयेगी। रात भर काँटों पर वह छटपटाता रहा, पर रात भर में काँटे टूटकर गिर गये और शरीर की पीड़ भी शीतल हवा लगने से कम हो गयी, अतः उसे नींद आ गयी। राजकुमारी स्नान करके आयी, युवक के माथे पर चंदन लगाया और कहा — ''आई थी मैं नहाई थी खड़ी सुखाऊँ केश, माथे चंदन लगाय के मैं बहन तू भाई।'' और उसे जगा दिया। युवक निराश हो गया। जब यह वृत्तांत रानी और उसकी सखी को ज्ञात हुआ तो दोनों बहुत प्रसन्न हुईं। राजकुमारी और शुद्र—पुत्र भाई—बहन होकर रहे। दोयज का पवित्र दिन आया, राजकुमार ने भाई को न्योता देकर बुलाया, अपने हाथ से भोजन बनाकर खिलाया तथा उसके माथे पर टीका कर बहुत आनंद मनाया।

३३—अक्षय नवमी

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को जो दान—धर्म व शुभ कार्य किया जाता है वह कभी व्यर्थ नहीं जाता। इस दिन व्रत रखकर आँवला की पूजा की जाती है। दोपहर को पूर्व की ओर मुँह करके आँवला के वृक्ष की

पूजा करनी चाहिए। दूध को धार बाँधकर वृक्ष पर चढ़ाना चाहिए। धूप, दीप, नैवेद्य अर्पण करके कपूर या घी की लम्बी बत्ती से आरती करनी चाहिए। आँवला के वृक्ष की परिक्रमा करके मस्तक टेककर दंडवत् प्रणाम करना चाहिए। यदि संभव हो, तो ब्राह्मण को भोजन करायें अथवा कुछ मिष्ठान्न या अन्न ब्राह्मण को अवश्य देना चाहिए। सौभाग्यवती स्त्रियाँ लाल कपड़े में पेठा बाँधकर पचरतनी तथा दक्षिणासहित ब्राह्मण को दें। पुरुष व विधवा स्त्री को सफेद वस्त्र में पचरतनीसहित पेठा बाँधकर दक्षिणासहित वेदपाठी तथा सुपात्र ब्राह्मण को देना चाहिए। इससे कठिन से कठिन पापों का भी नाश हो जाता है। इस दिन आँवला का दान करना चाहिए तथा आँवला खाना भी चाहिए।

कथा – प्राचीन समय में एक पति–पत्नी थे जिनका नियम था कि अक्षय नवमी तथा आमला एकादशी को दोनों १०८ सोने के आँवले बनाकर ब्राह्मण को दान करते थे। समय बीतता गया, वृद्धावस्था आयी, नियम ज्यों का त्यों रहा। गृहस्थी का प्रबन्ध उन्होंने बहू के हाथ में सौंप दिया। बहू ने इन दोनों को इस प्रकार दान करते देखा, तो धन के कोठे में ताला लगा दिया। तब उन दोनों ने पूजा के सोने के पात्र तोड़–तोड़कर दान देना आरम्भ किया। कुछ समय बाद वे भी समाप्त हो गये। तब बहू से उन्होंने याचना की। बहू ने चाँदी के आँवले बनावाकर उन पर सोने का पत्तर मढ़वाकर ला दिये। इस प्रकार कुछ वर्ष बीते। एक दिन बहू ने कह दिया कि सोना खतम हो गया है। वृद्ध दम्पति ने चाँदी के आँवले बनाकर देने की माँग की, अब वे चाँदी के बनने लगे। कुछ वर्षों बाद वे भी मिलने बंद हो गये। तब दोनों दम्पति रात को घर छोड़कर जंगल की ओर चल दिये और ऐसे स्थान पर रहने लगे जहाँ आँवला का वृक्ष था। भगवान उनकी श्रद्धा–भक्ति से प्रसन्न हुए। भगवत्कृपा से उनके रहने के लिए महल बन गया। दोनों वही रहने लगे। इधर इनके बहू–बेटा का कुछ दिनों में सब धन चोर चुरा ले गये। वे निर्धन हो गये। वे सूप बनाकर बेचते और निर्वाह करते। एक दिन वे उसी वन की ओर जा निकले जहाँ वे वृद्ध दम्पति रहते थे। सुन्दर महल देखकर द्वार पर जाकर याचना की, ''हमें कुछ खाने को दो।'' पुत्र व पुत्रवधू गरीबी व कष्ट सहते–सहते इतने बूढ़े व कमजोर हो गये थे कि वे उन्हें पहचान भी न पाये, फिर भी अपनी सेवा के लिए दोनों को रख लिया। पुत्र जल भरकर लाता, पत्नी भोजन बना देती तथा वृद्धा की

सेवा करती। एक दिन वृद्धा को नहलाया तो स्त्री ने उसकी पीठ पर एक मस्सा देखा (उसकी सास की पीठ पर ऐसा ही मस्सा था) और रोने लगी। वृद्ध की पीठ पर गर्म आँसू गिरे, तो उसने पूछा, ''तू क्यों रोती है।'' वृद्धा ने उसका सारा हाल पूछा। उसे बताना पड़ा। सच्चा हाल जानकर सास ने पति को बुलाकर बताया। दोनों ने अपने बिछुड़े हुए परिवार को पाकर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत किया। बहू व बेटे का भाग्योदय हो गया। यह आँवला पूजन व ईश्वर–आराधना का ही परिणाम है।

३४–देव उठनी एकादशी

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी देव उठनी एकादशी कहलाती है। कहा जाता है कि आषाढ़ मास की एकादशी को भगवान, शंखासुर नामक महाबली राक्षस को मारकर, विपुल परिश्रम से थककर क्षीरसागर में सो गये थे और कार्तिक मास की इसी एकादशी को जागे थे, इस दिन सब देवताओं ने उनकी पूजा की थी। इस दिन घर को धो–लीपकर शुद्ध करके सारे घर में खरिया और गेरू से चौक बनाकर विभिन्न प्रकार की चित्रकारी की जाती है (चित्र पृष्ठ ७८, ७६ तथा ८०)। आँगन में चौकोर चौका लगाकर चक्र, चौक आदि रखते हैं तथा उस पर गन्ना, बेर, बैगन, मूली, शकरकंद रखकर परात से ढक देते हैं। परात के समीप या उसके ऊपर तेल या घी की लम्बी बत्ती का दीपक जलाया जाता है। खील, बताशा, पपड़ी, गुझिया आदि से भगवान का भोग लगाया जाता है।

सूर्य के अस्त होने के बाद परात को उठाते हैं और 'उठो देवा, बैठो देवा, पिंडलियाँ फैलाओ देवा' गाकर परात को गन्ने के टुकड़े से बजाते हैं, फिर आरती करते हैं। उसी दीपक से परात में काजल बनाकर सब स्त्री–पुरुष–बालक आखों में लगाते हैं। स्त्रियाँ रातभर जागरण करके भजन व मंगल गीत गाती हैं। आँगन की दीवार पर खरिया से गोल–गोल बिन्दी लगाई जाती है, ये 'चपेटा' कहे जाते हैं। बीच–बीच में गेरू की बिन्दी लगती है, ये 'झाबी' कहलाती हैं। द्वारों के पास दीवार में खड़ी लकीरें बनाई जाती हैं, ये 'मंजीर' कहलाती हैं। स्त्रियाँ गाती रहती हैं –

''ओने–कोने धरे चपेटा (बहुओं का नाम लेकर) ये हैं बहू तेरे बेटा,
ओने–कोने धरे मंजीर (बेटियों का नाम लेकर) ये हैं बेटी तेरे बीर,
ओने–कोने लटकी झाबी (ननदों का नाम लेकर) ये बीबी तेरी भाभी।''

रात्रि भर जागरण कर, दिन निकलने पर पूजा का सामान कुछ दक्षिणा रख कर किसी ब्राह्मण या ब्राह्मणी को दिया जाता है।

३५—मकर संक्रान्ति

पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए जब सूर्य मकर राशि में आता है, तब मकर संक्रान्ति होती है। इसका मास तथा पक्ष निश्चित नहीं है, यह कभी पौष, कभी माघ में, कभी शुक्ल पक्ष में, कभी कृष्ण पक्ष में होती है और अंग्रेजी तारीख से प्रायः १४ जनवरी को होती है। इस दिन प्रयाग में त्रिवेणी—स्नान अथवा अन्य किसी क्षेत्र में नदी में स्नान करते हैं। हम लोगों के यहाँ यह पर्व बड़े हर्ष, उल्लास व उत्साह से मनाया जाता है। हास—परिहासयुक्त व्यंग्य, मुहावरे कहकर सास—ससुर, जेठ—जेठानी, नन्द—नन्दोई, देवर, भांजा—भांजी आदि को भेंटस्वरूप कुछ दिया जाता है। इसे **'वत'** देना कहते हैं। इस दिन भारत के सभी हिन्दू जातियों में तिल, गुड़ व खिचड़ी का दान करने की प्रथा है। इस दिन चौके (रसाईघर) में खिचड़ी अवश्य बनती है और जिसे सब लोग खाते हैं। इस पर्व का नाम **'खिचड़ी'** पड़ गया है।

संक्रान्ति का मतलब — जब सूर्य एक राशि से दूसरी राशि पर जाता है उस समय का नाम संक्रान्ति है। एक राशि से दूसरी में जाने के बीच की बीस—बीस घड़ी पुण्य का समय मानी जाती है।

संक्रान्ति की पूजा विधि — सोने की बनी सूर्यनारायण की मूर्ति को चौकी पर स्थापित करके धूप, दीप, नैवेद्य से पूजा करें। निराहार रहना या एक समय भोजन करना चाहिए। यह पूजन सब पापों का नाश करने वाला है।

सौभाग्यवती स्त्रियाँ एक दिन पहले सिर धोकर, मेंहदी लगाकर मैदा के पकवान 'ऊबेफल' बनाकर रखती हैं। तिल के और गेहूँ के आटा के लड्डू बनाये जाते हैं।

संक्रान्ति को १४ फल, तिल और आटा का एक—एक लड्डू व कुछ द्रव्य पूज्यजनों को बायना में दिया जाता है। विवाह के बाद ६ साल तक क्रमशः निम्न 'वत' काढ़ने की प्रथा है :—

(१) चकला लोढ़ी, (२) गुड़ की भेली, (३) काले गोरे (तिल व आटा के) १४ लड्डू, (४) करकरे चरपरे (सोंठ मिलाकर आटा के) १४ लड्डू, (५) गाजने—बाजने (दो दियाली के बीच में पैसा रखकर लड्डू के भीतर बंद करके) १४ लड्डू, (६) झुनझुना (खोया का झुनझुना बनाकर) एक, यह सभी

सामान बायने के साथ हर वर्ष क्रमशः अपनी ननदों को देते हैं।

हास—परिहासयुक्त इन वतों के विषय में नीचे थोड़ा लिखने का प्रयास किया गया है —

सास को देने वाले वत —

(१) ओढ़ाऊँ सास चादर, करूँ आपका आदर।
(२) मूढ़े बैठी पाटे पाँ, राज करें साजन की माँ।
(३) दही दहेड़ी ऊपर साग, ले सासू तेरे ऊँचे भाग।
(४) पहरो सास जी स्वेटर गर्म, आसन बैठी करो धर्म।
(५) डिब्बे में पान, रखूँ सदा सास का मान।
(६) थाली में पेड़ा बीस, सासू देना हमें असीस।
(७) आँगन खड़ी पहराऊँ, पट्टे बैठी जिमाऊँ।
(८) चमचम चौतरा चाँदी की बाढ़, इस परिवार की तुम्हीं आड़।
(९) गिलास में मीठा दूध, रहे सलामत सास का पूत।
(१०) लो सास जी मठरी, खोल दो अपनी गठरी।
(११) लो सास जी मेवा, सदा करूँ तुम्हारी सेवा।
(१२) लो सास जी तोता, गोद खिलाओ पोता।
(१३) चार साड़ी ऊपर कपड़े, सास न हमसे झगड़े।
(१४) चार साड़ी गिन्नी पाँच, सासू पोता ले के नाच।
(१५) बिछाओ गद्दा ओढ़ो लिहाफ, कभी न होना हमारे खिलाफ।

ससुर को देने वाले वत —

(१) भेली ऊपर भेली, ससुर जी दिखा दो अपनी हवेली।
(२) ससुर जी का करूँ मान, कंधे दुशाला ऊँची शान।
(३) भरा झोला, ससुर बड़ा भोला।
(४) थाल में मेवा, करूँ ससुर जी की सेवा।
(५) गद्दा ऊपर चादर, यही ससुर का आदर।
(६) डिब्बे में पान, करूँ ससुर का मान।
(७) ऊँची चौकी बड़ी शान, द्वारे बैठे करते सनमान।
(८) खाओ खीर पुआ, देना हमें दुआ।

(६) खिलाओ ललुआ, खाओ हलुआ।

ननद को देने वाले वत –

(१) आले अक्षत खूँटी चीर, ननद दिखा दे अपना बीर।

(२) ननद हमारी बड़ी रसीली, उन्हें खिलाऊँ गरम जलेबी।

(३) भर पस, ननदी हँस।

(४) पान भीतर सुपारी, ननद लगे हमें प्यारी।

(५) चार पात्र भरा बूरा, इस ननदी से पड़ा न पूरा।

(६) पहराऊँ चमकती अंगूठी, हमसे ननद जी कभी न रूठी।

(७) बैठो ननद पलंग पर सादर, यही तुम्हारा मेरे घर आदर।

(८) पहराऊँ ननद तुम्हें कपड़े, हमसे न करना कभी झगड़े।

(९) पूरी ऊपर लौंग, इस ननदी से जीते कौन।

(१०) तुम्हें पहराऊँ मुंदरी, अमर हमारी चुंदड़ी।

(११) लोटा भरा दूध, चिर जीवें तेरे पूत।
उसने डाली चीनी, ननद अपनी कर लीनी।
ऊपर पड़ी मलाई, जग में होय बड़ाई।।

(१२) चम्मच दूँगी चार, मत करो हमसे रार।

(१३) दूँगी कटोरी सात, हँस–हँस ननदी करना बात।

(१४) डिब्बी भरी रोली, ननद बड़ी भोली।

(१५) ओढ़ऊँ चादर, करूँ ननद का आदर।

(१६) पहराऊँ कपड़े सात, ननदी हँस–हँस करना बात।

(१७) चार कटोरी ऊपर तारा, यहाँ दान वहाँ निस्तारा।

ननदोई को देने वाले वत –

(१) भेंट करूँ गोला, ननदोई बड़ा भोला।

(२) खिलाऊँ खाजा, ननदोई बड़े राजा।

(३) हरी मिर्च लाल मिर्च बड़ी तेज, ननद हमारी भोली भाली ननदोई बड़े तेज।

भांजा को देने वाले वत –

(१) हाँडी में दही, ननद के बेटा ने मामी कही।

(२) पहर के नया सूट, सलामत रहे ननद का पूत।

(३) डिब्बे में बिस्कुट, भांजा खाये कुटकुट।

(४) रेवड़ी भरी थाल, ले ले ननद के लाल।

(५) दूँगी तुझे बादाम, कर दे मेरा काम।

(६) मीठा मीठा गोरा दूध, पी ले बेटा बड़ा सपूत।

(७) थाली भरे पेठा, मामी कहे ननद का बेटा।

भांजी को देने वाले वत –

(१) पहर ले बीबी नई साड़ी, मामी की है बड़ी दुलारी।

(२) भर दूँ पस, भान्जी जरा हँस।

जेठ को देने वाले वत –

(१) सरस गिलोरी सुन्दर पान, राखूँ सदा जेठ जी का मान।

(२) मेवा भरा झोला, जेठ हमारा बड़ा भोला।

(३) जेठ जी का करूँ मान, कंधे दुशाला ऊँची शान।

(४) लो जेठ, पेड़ों की भेंट।

(५) भेली ऊपर भेली, दिखाओ जेठ जी अपनी हवेली।

(६) डिबिया भीतर पान सुपारी, जेठ को जिठानी प्यारी।

(७) थाली में मीठे आँवले, जिठानी गोरी जेठ साँवले।

(८) कोट में पैन, जेठ हमारे जैन्टिलमैन।

जिठानी को देने वाले वत –

(१) चीनी का चौंतरा लौंगों की बाड़, जिठानी न करना हमसे राड़।।

(२) पहरो नई साड़ी, रहे मित्रता गाढ़ी।

(३) पीले लड्डू ऊपर चढ़ी चाँदी, जिठानी न समझो हमें बाँदी।

(४) जेठ को भेंट जिठानी को मिठाई, थाल परोसी मिल–मिल खाई।

(५) डिब्बे भीतर भरी सुपारी, हमें हों जेठानी प्यारी।

देवर को देने वाले वत –

(१) थाली में बदाम, देवर करे सलाम।

(२) गोरा गोरा गोला, देवर मेरा भोला।

(३) पहर कर स्वेटर, देवर बनो बैटर।

(४) देवर देती फौन्टेनपैन, लिखो—पढ़ो, बनो जैन्टिलमैन।

जेठ के बेटे को देने वाले वत —

(१) कटोरी में दही, जेठ के बेटा ने चाची कही।

(२) थाली में बताशे, जेठौत करे तमाशे।

(३) थाली में बादाम, जेठ का पूत करे सलाम।

(४) गिलास भरा दूध, पी ले बेटा बनो सपूत।

(५) ले बेटा फौन्टेनपैन, लिख—पढ़कर, बन जेन्टिलमैन।

(६) पहर लो कमीज, सीख लो तमीज।

जेठ की बेटी को देने वाले वत —

इनको प्रायः नन्द व भांजी वाले वत ही दिये जाते हैं।

पति को देने वाले वत —

(१) भरा कटोरा दाखों का, वर पाया है लाखों का।

(२) पहराऊँ तुम्हें अंगूठी, मैं तुमसे कभी न रूठी।

(३) लो पिया गाजर, जब बुलाओ तभी हाजिर।

(४) खिलाऊँ पिया मिसरी, तुम्हारे दिल से कभी न बिसरी।

(५) बाँध दूँ हाथ में घड़ी, समय का ध्यान रखती यह घड़ी।

(६) पहराऊँ तुम्हें सूट, कभी न हमसे रूठ।

(७) खिलाऊँ तुम्हें पान, सदा करूँ तुम्हारा मान।

समधन को देने वाले वत —

(१) बंद डिबिया में रक्खे पान, मन में रहे समधन का मान।

(२) सरस जलेबी ऊपर पान, ऐसा करो समधन का सम्मान।

(३) थाली भरी मिठाई, समधी—समधन मिल—मिल खाई।

(४) लो समधन जी मीठी खुटिया, तुम्हें सौंपी अपनी बिटिया।

पेट में बच्चा हो तब वत काढ़ना — एक कटोरा में १ गोला उस पर १ जोड़ा कलावा लपेट कर १४ फल व २ लड्डू सहित वत काढ़ा जाता है।

गोद में लड़का हो — पूरी ऊपर सूत, रहे सलामत मेरा पूत।

गोद में लड़की हो — पूरी ऊपर घी, रहे सलामत मेरी धीय।

अन्य संक्रान्ति को भी व्रत किया जाता है। एक राशि से दूसरी राशि में सूर्य के प्रवेश के समय की १६—१६ घड़ी दान—पुण्य व धर्म—कार्य के लिए उत्तम व फलदायक मानी गयी है।

व्रत करने का विधान — प्रातः स्नान आदि से निपटकर व्रत का संकल्प करें। चौकी पर लाल वस्त्र बिछाकर सूर्य भगवान की मूर्ति स्थापित करें। सूर्य की मूर्ति लाल चंदन से कपड़े पर भी बनायी जा सकती है। मूर्ति को स्नान कराके, वस्त्र, चंदन या रोली, पुष्प, धूप व नैवेद्य से पूजन करके, फलाहार या अन्न का बना भोजन एक बार करें। हो सके, तो 'सूर्याय नमः' का १००० बार जप करें। तिल, शक्कर, घी से हवन करें। बन पड़े तो अन्न, वस्त्र का दान करें, इनमें से जो भी साधन सुगमतापूर्वक बन पड़े करें। रूप संक्रान्ति व्रत करने वाले स्त्री—पुरुषों को चाँदी, ताँबा या ढाक के पत्ते पर घी, सोना रखकर दान करना चाहिए। इस दिन व्रत व पूजा करने से सर्व पाप—बाधाओं का शीघ्र ही नाश हो जाता है।

आयु संक्रान्ति व्रत — काँसी के कटोरी में यथाशक्ति घी, दूध, सोना रखकर धूप, रोली, पुष्प से पूजन करने से अरोग्यता और आयु बढ़ती है।

मकर संक्रान्ति व्रत — इस दिन व्रज—पूजन करके तीन मुट्ठी तिल दान करने से कष्ट और व्याधि दूर होती है।

तेज संक्रान्ति व्रत — ताँबा या मिट्टी के कलश को चावल से भरकर उस पर घी का दिया जलाकर सूर्य भगवान का ध्यान करके ब्राह्मण को चार लड्डू सहित दान करने से तेज व बल बढ़ता है।

भोग संक्रान्ति व्रत — सपत्नीक ब्राह्मण को भोजन कराके दोनों को दो—दो वस्त्र देकर दक्षिणा देने से यथारुचि भोग मिलते हैं।

३६—गणेश चौथ

माघ मास के कृष्ण पक्ष की चौथ को सकट चौथ कहते हैं। इसी दिन गणेश जी का जन्म हुआ था। तीज के दिन सिर से स्नान करके मेंहदी लगायी जाती है, फिर चौथ को दिन भर व्रत किया जाता है। शाम को सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। सूर्यास्त के बाद तिल, गुड़ कूटकर तिलकुट

बनाया जाता है। मैदा या गेहूँ के आटे का 'आस' नामक पकवान मीठा–फीका बनाया जाता है। एक पट्टे पर तेल से एक गोल घेरा बनाकर उसमें कलावा के तार–लपेटी सुपारी रखकर गणपति (गणेश जी) की स्थापना की जाती है। तिल के या तिलकुट के २४ छोटे–छोटे लड्डू चढ़ाये जाते हैं, तथा ४ मीठी आस, ४ फीकी आस व तिलकुट का भोग लगता है। कड़ुवे तेल का दीपक जलाया जाता है। ताला और ताली की पूजा की जाती है। रात्रि में चंद्रोदय होने पर अर्घ्य देकर चंद्रमा का तिलकुट व चूरमा से भोग लगाया जाता है, तत्पश्चात् पारण–भोजन होता है। यह व्रत विधवा, सुहागिन सभी स्त्रियाँ करती हैं। भोजन में पूड़ी, चूरमा, तिलकुट व आस खाये जाते हैं।

अन्तर्कथा – एक देवरानी और जेठानी थी। जेठानी निर्धन थी और देवरानी के घर काम–काज करके निर्वाह करती थी। वह सदा सकट चौथ का व्रत करती थी। इस दिन उसने अपने पति से कहा – ''आज मैं गणेश पूजन करूँगी, गुड़ व तिल ला दो।'' पति के पास पैसे न थे, जब उसकी पत्नी बार–बार सामान लाने को कहने लगी तो क्रोध आ गया। एक पट्टा उठाकर उसे मारा और घर से चला गया। जेठानी जब देवरानी के घर का तिलकुट कूट करके लौटी, तो बिना हाथ धोये आयी, उसी से पूजा की और वैसे ही निराहार पड़ रही। शरीर में पीड़ा होने से नींद न आयी। सकट देवता उसके द्वार पर आये और यह आवाज देकर उसे जगाया – ''ओटरे मारी पोटरे सोती किवाड़ खोल।'' उसने द्वार खोला। सकट देवता ने भोजन माँगा, तो कहने लगी – ''यहाँ क्या धरा है, पट्टा पर कुछ तिलकुट हैं, तो चाट लो।'' सकट देवता ने चाट–चाट कर खाया और फिर आवाज लगाई – ''मैं मल–त्याग कहाँ करूँ ?'' लेटे ही लेटे उसने उत्तर दे दिया – ''चारों कोना, पाँचवी देहरी।'' घर में जल भी न था। सकट देवता ने कहा – ''मल कहाँ पोंछूँ ?'' वह क्रोध में भरकर बोली – ''मेरे सिर में पोछ ले।'' झट सिर में मल पोछ कर सकट देवता चले गये। जैसे–तैसे रात बीती, सवेरा हुआ। सारा शरीर मार पड़ने से दुख रहा था। उसने सोचा घर धोना पड़ेगा, मल पड़ा होगा। पर यह क्या ? ज्यों ही सिर पर हाथ पड़ा, बाल कड़े–कड़े हो रहे थे। जब वह घर के बाहर आई, तो देखा, चारों कोनों और देहरी पर सोने के ढेर चमचमा रहे हैं। तब वह सारा दुःख–दर्द भूल गई और स्वर्ण उठा–उठाकर कोठरी में रखने लगी। दिन चढ़ आया था। देवरानी के घर

से बच्चे बुलाने आ गये – ''चल ताई, देर हो रही है।'' उसने कहा, ''जाकर अपनी माँ से कह दे, मुझे तो भगवान ने सब कुछ दे दिया है अब मैं टहल करने नहीं आऊँगी।'' बच्चों से उत्तर सुनते ही देवरानी दौड़ती हुई आई, जिठानी के घर में सोना चमचमाता देख सारा वृत्तांत पूछा और सुनकर कुढ़ गई। देवरानी ने आगामी वर्ष की चौथ को सवेरे से ही 'तिल, गुड़ ला दो' की रट लगाई और पति को क्रोधित कर दिया। पति ने ढेर–सा तिल व गुड़ लाकर रख दिया, खूब तिलकुट तैयार हुआ। अब वह पति से कहने लगी – ''जिठानी को तो जेठ जी ने मारा था, मुझे भी मारो।'' तब वह बोला – ''भाई के पास तो पैसा न होने से क्रोध आ गया था, तू इतना सामान तैयार कर लेने पर भी क्या कसर मानती है ?'' पर बार–बार कहने पर उसे भी क्रोध आ गया, दो–चार पट्टे मार दिये। वह पलंग बिछाकर लेट रही। रात को सकट देवता आये। बड़े–बड़े थालों में अनेक ब्यंजन परोसे रखे थे। सकट देव ने भोजन किया फिर बोले – ''मल–त्याग कहाँ करूँ ?'' लेटे ही लेटे उसने कह दिया, ''चारों कोना, पाँचवीं देहरी।'' मल त्याग कर सकट देव ने पूछा – ''मल कहाँ पोछूँ ?'' वह बोल उठी, ''मेरे सिर में।'' गणेश देव तो चले गये। रातभर सोना पाने की खुशी में उसे नींद न आई। दुर्गन्ध के कारण सारा घर दूषित हो रहा था। जल्दी से उठकर सोने की बाल होने की आशा से सिर पर हाथ फेरा, तो मल से सन गया। दौड़कर आँगन में आई। सब ओर मल ही मल पड़ा था। क्रोध में भरकर वह गालियाँ बकने लगी। शोर सुनकर घर के सब लोग जाग उठे। वहाँ का हाल देखकर उसके पति ने कहा – ''तूने अकारण ही इतना कष्ट उठाया, नाहक मार खाई।'' बेचारी दिन भर मल बटोरती, घर साफ करती रही, जिसने यह सब हाल सुना उसी ने उसकी हँसी उड़ाई।

जो शुद्ध मन से विधानपूर्वक पूजन करते हैं उन्हें उसका अच्छा फल मिलता है, परन्तु लालचवश पूजन करने पर बुरा फल।

३७—वसंत पंचमी

यह माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को होती है। इन दिनों वसंत ऋतु का आगमन होता है। वृक्षों पर सुकोमल नवीन पत्तियाँ निकलने लगती हैं। सारे वन और बाग–बगीचों में रंग–रंग के सुन्दर फूल दिखाई पड़ने लगते हैं। खेतों में सरसों के फूलों से पीला ही पीला दीखने लगता है।

वसंत पंचमी के दिन नये अन्न से भगवान का भोग लगाया जाता है। सरस्वती जी की पूजा होती है। आम का बौर, पीले फूल, बेर और ऋतु–फल सरस्वती जी को अर्पण किये जाते हैं।

केसर–मिश्रित चंदन तथा पीले वस्त्र भगवान को पहनाये जाते हैं। भोजन सामग्री में भी केसर डालकर व्यंजन बनाये जाते हैं तथा पीले रंग के फूल अर्पण कर पूजन किया जाता है। कहीं–कहीं कामदेव व रति की भी पूजा की जाती है। इस पूजन से हृदय में प्रसन्नता तथा उल्लास उत्पन्न होता है। देश भर में प्रथानुसार, क्या शहर, क्या गाँव सभी जगह यह उत्सव मनाया जाता है।

३८—शिवरात्रि

ईशान संहिता में लिखा है कि फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की इसी त्रयोदशी की रात में शिवलिंग का प्रादुर्भाव हुआ था। इसी से यह महाशिवरात्रि कहलाती है। यह त्योहार समस्त भारत में मनाया जाता है। इस दिन शिव–पार्वती, गणेश व स्वामी कार्तिकेय नंदी की पार्थिव मूर्तियाँ बनाकर पूजा होती है। इन्हें गंगाजल से स्नान अवश्य कराना चाहिए। व्रत रखकर दिन एक बार तथा रात्रि में तीन बार पूजा की जाती है। रात में जागरण करके भजन–कीर्तन करते हैं। प्रातःकाल मूर्ति–विसर्जन होता है। ब्राह्मण को भोजन कराने का भी विधान है।

पूजन में बेलपत्र, फूल, चावल, चंदन, धूप, कपूर, दूध, शहद, घी, दही, बेल, धतूरा, मदार के फूल, भाँग और ऋतु–फल होने चाहिए।

एक बार कैलाश पर्वत पर बैठी पार्वती जी ने शिव जी से पूछा – ''ऐसा कोई व्रत बताइए जिसके करने से मनुष्य सायुज्य को प्राप्त हो।'' तब शिव जी ने बताया – ''जो व्यक्ति इसी तेरस को प्रदोष काल में व्रत करके मेरी पूजा करे व रात्रि–जागरण करे तो उसे शिवलोक की प्राप्ति होगी।''

अन्तर्कथा – एक बहेलिए ने साहूकार का रुपया समय पर नहीं चुकाया। इससे रुष्ट होकर साहूकार ने बहेलिये को शिवालय के पीछे की कोठरी में बन्द कर दिया। वहाँ उसने शिवालय में होने वाली सब पूजा–कथा–वार्ता सुनी। सवेरा होने पर उसे खोलकर इस वादे पर छोड़ा कि वह कल शाम तक रुपया चुका दे। रुपया अदा करने की चिन्ता में बहेलिया रात को जंगल की ओर चला गया और एक पेड़ पर चढ़कर बैठ गया और पानी पीने आने वाले पशुओं का इंतजार करने लगा। वहाँ एक

तालाब था। एक हिरनी पानी पीने आई। बहेलिया ने धनुष–बाण सम्हाला। कुछ पत्ते गिरे, खटका हुआ। हिरनी ने उधर देखा कि एक बहेलिया धनुष ताने बैठा है, वह घबराकर कहने लगी, ''मैं गर्भिणी हूँ, मुझे मत मारो, मैं बच्चा होने के बाद लौट आऊँगी तब मुझे मार डालना।'' बहेलिया ने धनुष पर से बाण उतार लिया। दिन भर के भूखे–प्यासे बेचारे बहेलिया को तालाब पर पानी पीने आने वालों जीवों का इंतजार करते–करते तीन पहर रात बीत गई। तब एक मोटी हिरनी पानी पीने आयी। बहेलिया धनुष पर बाण चढ़ाकर छोड़ना ही चाहता था कि वह कहने लगी – ''दया करो, मैं ऋतुमती हूँ, मुझे इस समय मत मारो, कल आऊँगी तब मार डालना।'' यह सब सुनकर बहेलिया सोचने लगा कि सभी प्राणी अपने–अपने धर्म को समझते हैं। इसी प्रकार चौथा पहर होने को आया, उसी समय एक मोटा–तगड़ा हिरन पानी पीने आया। उसे देखकर बहेलिया बड़ा प्रसन्न हुआ और धनुष पर बाण चढ़ाकर बाण छोड़ना ही चाहता था कि हिरन ने बहेलिये को बाण चढ़ाये बैठा देख लिया। वह बोला – ''यदि तुमने थोड़ी देर पहले आई हुई मेरी पत्नी को मार डाला है, तो मुझे भी मार दो और यदि नहीं मारा है, तो मैं उससे मिलकर आ जाऊँ, तब मुझे मार डालना।'' बहेलिया ने कहा – ''भाई मृग, तीन हिरनी आयीं और लौटकर आने का वादा करके चली गईं। तुम भी उसी प्रकार जीवित चले जाओगे।'' हिरन ने कहा – ''मैं शपथ खाकर कहता हूँ कि उन तीनों को भी साथ लेकर आऊँगा, तुम इसी स्थान पर हमारी राह देखो।'' यह कहकर हिरन दौड़ता हुआ अपने स्थान पर गया और अपने परिवार से मिलकर उन तीनों हिरनियों को साथ लेकर चलने को तैयार हुआ। उसकी इस सत्य प्रतिज्ञा के कारण सारे वन में सनसनी फैल गई। सब पशु एक–दूसरे से गले मिल–मिलकर रो रहे थे। वन में अनेक पशु एकत्रित हो गये थे और वे उसकी सत्य प्रतिज्ञा की प्रशंसा करने लगे। उनके रोने से कोलाहल मच गया और उनके आर्तनाद से वन गूँज उठा। ये शब्द बहेलिया को भी सुनाई पड़ रहे थे।

तीनों हिरनी, चारों बच्चे और हिरन उसी वृक्ष के नीचे आ गये और मुँह ऊपर उठाकर बहेलिया की ओर देखने लगे। बहेलिया उनके सत्यपालन की नीति को देखकर बड़े दुःख से रोने लगा और किसी को भी न मारने का संकल्प करके पेड़ पर से उतर आया। उन सब से उसने कहा – ''आज से मैं जीवहत्या नहीं करूँगा। तुम अपने स्थान पर जाओ।''

बहेलिया बेल वृक्ष पर बैठा हुआ था। बार–बार धनुष–बाण उठाने–रखने से बेलपत्र टूटकर नीचे गिरते थे। उसी वृक्ष के नीचे शिवलिंग था। हर बार बेलपत्र उसी शिवलिंग पर गिरे। शिवपूजन हुआ, दिन–रात का भूखा–प्यासा तो था ही, रात भर जागरण भी किया था, जीवहत्या न करने की प्रतिज्ञा भी की, इन सब कार्यों से उसके सब पाप नष्ट हो गये। साहूकार का पैसा उसने मेहनत–मजूरी करके चुका दिया। उसका मन भगवत्–भक्ति में लग गया। अन्त समय में वह शिवलोक को प्राप्त हुआ।

३६—होली

फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को होली होती है। इस दिन व्रत किया जाता है। शाम को चार बजे के लगभग होली जलाने के स्थान पर, जहाँ लकड़ी एकत्रित की गई हो, जाकर होली का पूजन किया जाता है। पूजन के समय भद्रा न होनी चाहिए। फुलेरा दोयज को या उसके बाद गोबर के जो बल्ला बनाकर रखे जाते हैं, होली पूजन के समय उन्हीं को बान में पिरोकर मालाएँ बनायी जाती हैं। पाँच–पाँच बल्लों की ५ मालाएँ बनती हैं। एक माला छप्पर या खपरैल, जो प्रायः गाँव में घरों पर छाये रहते हैं, पर डाल दी जाती है। दूसरी किसी खूँटी पर, तीसरी पथवारी देवी पर, चौथी देवी के मंदिर में और पाँचवीं माला बसौड़ा के दिन देवी जी की पूजा करते समय चढ़ा दी जाती है।

इनके अतिरिक्त बल्लों की पाँच बड़ी–बड़ी मालाएँ बनायी जाती हैं, जो होली की पूजा के समय वहाँ पर चढ़ा दी जाती है। जल, हल्दी, चावल से पूजा करके चार पूरी व गुलगुला व पाँच सिक्के होली पर चढ़ाये जाते हैं। रेंड का वृक्ष होली का स्तम्भ होता है। बच्चे सूत की कुकड़ी से ६ तार पूरकर स्तम्भ को ६ तार का जनेऊ पहरा दिया जाता है और उसकी परिक्रमा भी की जाती है।

सूर्यास्त के बाद भद्रारहित मुहूर्त में होली का अग्निसंस्कार किया जाता है। रात्रि को होली जलने के बाद बाँस की एक छोटी डलिया या थाली में २ गाँठ हल्दी, १ कुकड़ी, हरे जौ की ५ बाली तथा हलुआ लेकर घर के पुरुष वहाँ जाते हैं। एक लोटे में दूध व जल भी ले लेते हैं। दूध अग्नि में डालकर ४ बार होली की परिक्रमा करते हैं। एक गन्ने में हरे जौ की बालियाँ, कुसुम के फूल, रेंड़ी की बाँड़ियाँ तथा हरे बूट (चना) बाँधकर अग्नि में भूनकर घर ले जाते हैं। घर लाकर सब लोग गन्ना को चूसते हैं। जौ के दो–दो दाने हाथ में लेकर अपने बड़ों के पैर छूकर उन्हें प्रणाम किया जाता है और छोटों से गले मिलकर एक–दूसरे को शुभाशीर्वाद देते हैं।

डलिया या थाली, जिसमें सामान रखकर पूजा करने गये हों, को अग्नि की लपट में दिखाकर वापस ले आते हैं। दिन निकलने पर स्त्रियाँ स्नान करके कुकड़ी के सूत से दस–दस तार के सवा हाथ लम्बे दसिया पूर कर रखती हैं। कुंवारी लड़कियों के लिए ५–५ तार की दसिया बनायी जाती हैं। लड़कों की कमर में ६–६ तार की करधनी बनाकर बाँधी जाती हैं। जब तक लड़कों का जनेऊ नहीं होता तब तक करधनी बांधी जाती है। हल्दी की गाँठ को पत्थर पर घिसकर उसमें दसिया व करधनी रंग ली जाती हैं और सुखाकर बायें हाथ में स्त्रियाँ दसिया बाँधती हैं, फिर लड़कियों के बायें हाथ में दसिया तथा लड़कों की कमर में तगड़ी (करधनी) बाँध देती हैं।

बैसाख शुक्ल पक्ष में किसी शुभ दिन दसिया खोले जाते हैं। छठ, सप्तमी, दशमी, चौदस तिथि को छोड़कर भद्रारहित तिथि होनी चाहिए। सोमवार, शनिवार और वृहस्पतिवार अच्छे दिन माने जाते हैं। यदि किसी कारणवश बैसाख में दसिया न खोले जा सकें, तो जेठ की अमावस्या को खोले जाते हैं।

होली की अन्तर्कथा – दैत्यवंश में हिरण्यकश्यप बड़ा बलवान राजा था। उसने तपस्या करके शिव जी को प्रसन्न कर लिया था और उनसे यह वर माँग लिया था – "मैं न तो दिन में मारा जा सकूँ, न रात्रि में, न पृथ्वी पर, न आकाश में, न मनुष्य से, न किसी पशु–पक्षी से, न किसी अस्त्र से, न शस्त्र से, न देव से, न दानव से।" ऐसा वरदान पाकर वह सम्पूर्ण पृथ्वी पर अधिकार करके देवताओं तक को पीड़ित किया करता था। उसके कई पुत्र थे। सबसे छोटे पुत्र का नाम प्रह्लाद था। वह भगवत्प्रेमी धर्मात्मा था। वह रह समय राम–राम जपा करता था। जब गुरु जी पढ़ाते, तो भी वह राम का ध्यान रखता। अवकाश के समय वह सहपाठियों को लेकर रामधुन में तल्लीन हो जाता। यह सब उसके पिता को बुरा लगता था। उसे बुलाकर कई बार समझाया, धमकाया और डराया गया, पर वह न माना। रुष्ट होकर पिता ने उसे कष्ट देने का निश्चय किया और भाँति–भाँति से उसको मारने के उपाय किये यहाँ तक कि उसे पहाड़ की चोटी पर से ढकेल दिया गया।

पर भक्त रक्षा तो सदैव भगवान करते हैं, उसके कहीं भी चोट नहीं आयी। यह देख हिरण्यकश्यप को बड़ा आश्चर्य हुआ।

प्रह्लाद की एक बुआ थी, उसने सूर्यनारायण की तपस्या करके एक ऐसा वस्त्र पाया था, जिसे ओढ़ ले, तो अग्नि का कुछ असर उस पर नहीं होता था। उसने भाई को सलाह दी कि मैं इसे गोद में लेकर वस्त्र ओढ़कर बैठ जाऊँगी, तुम आग लगवा देना। इस प्रकार यह जल जायेगा। ऐसा ही किया गया। ईश्वर की कृपा से बुआ का वस्त्र उड़कर प्रह्लाद के ऊपर लिपट गया। बुआ जल गई, प्रह्लाद जीता जागता बैठा रहा। इसी आनन्द–स्मृति में यह त्योहार प्रति वर्ष हर्षोल्लास से मनाया जाता है।

प्रह्लाद के जीवित बच जाने पर उसके पिता ने स्वयं उसका सिर काटने का निश्चय किया। एक दिन सायंकाल क्रोध में भरा हुआ हाथ में तलवार लेकर सामने आया और कहने लगा – "आ, देखूँ तेरे भगवान को, कैसे वह तेरी रक्षा करता है।" जिस स्थान पर वह खड़ा था वहाँ एक खम्भा था। प्रह्लाद ने कहा – "पिता जी ! भगवान सब जगह मौजूद है, इस तलवार में, इस खम्भे में भी, वह तो सब स्थानों पर है।" हिरण्यकश्यप क्रोधित तो था ही, जोर से खम्भ में तलवार मारी और कहा, "देखता हूँ तेरे भगवान को। यदि कहीं है, तो आकर तेरी रक्षा करे।" खम्भ फट गया उसमें से नरसिंह रूप अर्थात् सिर सिंह का धड़ मनुष्य का, ऐसा विचित्र रूप धारण किये हुए भगवान प्रकट हो गये। उसी खम्भ पर बैठकर हिरण्यकश्यप को पकड़कर अपनी गोद में जाँघों पर रखकर अपने बड़े–बड़े नखों से उसका पेट फाड़ डाला। उस समय न तो दिन था न रात्रि, न ही वह पृथ्वी पर था न आकाश में, नरसिंह रूप में वे न मनुष्य रूप में थे न पशु या पक्षी के रूप में, न वे देव थे न दानव, वह स्वयं भगवान थे। इस प्रकार न अस्त्र से न शस्त्र से (नाखूनों से) उन्होंने शिव जी के वरदान को भी रखते हुए हिरण्यकश्यप का वध किया।

प्रह्लाद हाथ जोड़े खड़ा था। उस विकराल रूपधारी भगवान का दर्शन करके वह कृतार्थ हुआ और विनती करने लगा। भगवान ने उसे आशीर्वाद दिया और अन्तर्ध्यान हो गये।

यह अवतार बैसाख शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को हुआ था। इसीलिए इस चतुर्दशी को नरसिंह (नृसिंह) चतुर्दशी कहते हैं।

४०—धुलेंड़ी

होली जलने के दूसरे दिन रंग व गुलाल से होली खेली जाती है। नये जौ की बालें अथवा कुछ दाने जौ के हाथ में लेकर पूज्यजनों को प्रणाम किया जाता है। जौ के दाने एक–दूसरे को देकर गले मिलते हैं। माथे पर गुलाल लगाना शुभ माना जाता है। प्रह्लाद के अग्नि से बिना–जले जीवित निकल जाने की खुशी में भगवत्–भक्तजनों ने अबीर गुलाल उड़ा–उड़ाकर खुशी मनायी थी। तभी से गुलाल उड़ाने की प्रथा चली आ रही है।

धुलेंड़ी के दिन नव–विवाहिता बहुएँ वसंत पूजन करती हैं। पूजा में नये जौ, गुलाल, मेंहदी, हल्दी, चावल, जल और फूल चढ़ाये जाते हैं।

पूजा–विधि – पृथ्वी को धोकर चौकोर चौका बनायें और उस पर कटोरा में गौर को रखकर स्नान करायें और कहती जायें – पड़वा नहाई, दोयज नहाई, तीज को त्रिवेनी नहाई, चौथ को चौरासी नहाई, पाँचे को पाँच भाई की बहन, छठ को छः देवर–भौजाई, साते को सात पूत की माई, आठे को आठ घड़ा भर लाई, नौमी को नेम साध आई, दसमी को मैं नहाई–धोई और पट्टे बैठी।

आये कृष्ण जी पूछी बात।
कै तू नहाई बाली भोली, कै तू पूजी बाल वसंत।
मैं ही नहाई बाली भोली, मैं ही पूजी बाल वसंत।
कैसे तू पूजी बाल वसंत, कैसे पाया कृष्ण कंत।
कहाँ उतारूँ लाई झारी, माँ–बाप भरी क्यारी।
कहाँ उतारूँ लाई झारी, भाई–भतीजे भरी क्यारी।
कहाँ उतारूँ लाई झारी, सास–ससुर भरी क्यारी।
कहाँ उतारू लाई झारी, सुहाग भाग भरी क्यारी।
कहाँ उतारूँ लाई झारी, बेटे–पोते भरी क्यारी।

गौर को कटोरा से निकालकर जमीन पर हल्दी से सथिया बनाकर उस पर रख दें फिर बायें हाथ पर १६ नये जौ रखें और हल्दी लगा–लगाकर निम्न वाक्य कहते हुए जौ गौर पर चढ़ायें –

जौ हरे कृष्ण जी भरे, जौ बाले कृष्ण जी काले।
जौ की क्यारी कृष्ण जी की प्यारी।
जौ की रास कृष्ण जी बैठे रुक्मिणी पास।

जौ चढ़ाने के बाद गौर पर अर्घ्य देकर और हल्दी से बिन्दी लगाकर अक्षत, गुलाल, अबीर, मेंहदी तथा फूल चढ़ा दें। तत्पश्चात् दीपक जलाकर अथवा ओढ़ने के पल्ला का तार निकालकर सीप पर रखकर गौर की आरती करते समय कहें –

'चाकचढ़ा कुम्हार घड़ा कडुआ तेल कसूमल बाती गौर आगे दिया बाती।

आरती के बाद गौर के चरण स्पर्शकर माथे पर लगायें। इस प्रकार ११ दिन गौर की पूजा की जाती है।

गौर पूजा करते समय यह वाक्य कहते जाते हैं –

''गंगा का घाट यमुना का पाट, राता फूल बत्तीसी जोड़ी तहाँ
बिठाऊँ ईश्वर–गौरी।
ईश्वर–ईश्वर तुम महीश्वर कानन कुंडल जौ की माला,
राजा पूजे राज को पाट को मैं पूजूँ सुहाग को भाग को।
खाऊँ अलोना देऊँ सलोना, मन चीते फल पाइये रानी दीने कंत,
कंत चोली पेट पोली भाई–भतीजे अविचल जोड़ी।''

इस प्रकार शुभ आशीर्वाद माँगें और गौर के चरण छूकर पूजा समाप्त करें। इसके पश्चात् सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। नित्य पूजा के जल को किसी वृक्ष पर या शुद्ध स्थान पर डाल देना चाहिए।

विसर्जन के समय मिट्टी की डली तथा चढ़े हुए अक्षत–पुष्प आदि शुद्ध स्थान पर डाल देने चाहिए।

४१–बसौड़ा – शीतला अष्टमी

चैत्र मास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को यह पूजा की जाती है। इस दिन देवी जी की पूजा ठंडी वस्तुओं से की जाती है और ठंडे–बासी भोजन का भोग लगता है, इसलिए एक दिन पहले भोजन बनाकर रख देते हैं। भोजन में मीठे चावल, लपसी, रबड़ी, हलुआ, पूरी, गुलगुला आदि बनाये जाते हैं और यही सब खाया जाता है। यह वर्ष का अंतिम त्योहार है।

इस दिन घर के स्त्री–पुरुष, बाल–वृद्ध सभी मिलकर पूजा करते हैं। हर परिवार में दुर्गा देवी की मूर्ति होती है, उसी को रखकर पूजा की जाती है। पूजा के लिए फूल, बताशा, हल्दी, चावल, हल्दी–चावल पीसकर बना हुआ ऐपन, दही, गुड़, तेल होना चाहिए। कुछ दक्षिणा भी चढ़ाई जाती है।

चढ़ाया हुआ पूजन का सामान मालिन को दिया जाता है। यदि सम्भव हो, तो देवीमंदिर में भी पूजा और दर्शन करने जाना चाहिए। बल्लों की मालाएँ, जो होली के दिन बनाकर रखी जाती हैं, देवी जी पर चढ़ाई जाती हैं।

घर के आँगन में या सड़क के चौराहे पर पथवारी देवी की पूजा की जाती है। फूल, बताशा व पूजा के लिए बना भोजन चढ़ाया जाता है। ये चीजें मेहतर को दी जाती हैं। पहली रात्रि को जागरण किया जाता है, मंगल गान तथा देवी की स्तुति–गान करके उनकी आराधना की जाती है।

अन्तर्कथा – एक राजा के राज्य में देवी पूजा नहीं होती थी। नित्य की भाँति अष्टमी को भी सबके यहाँ भोजन बनता और खाया जाता था। देवयोग से राजकुमार के शीतला का प्रकोप हो गया। राजपुरोहित नित्य हवन, पूजन, देवी स्त्रोत, दुर्गा पाठ, बलिदान आदि करने लगे पर खाने–पीने का ढंग वही रहा। उन्हीं दिनों पड़ोस में एक गरीब के बच्चे को भी शीतला निकली। उसने बच्चे को गर्म वस्तुएँ खाने को न दीं। ठंडे जल से बच्चे का परछन किया जाता और उस जल को बाहर डाल देते। इस प्रकार कुछ दिनों में वह बच्चा ठीक होने लगा। जब बच्चे के ठीक होने का हाल राजा ने सुना, तो उसे बड़ी ईर्ष्या हुई। वह सोचने लगा – ''मैंने हजारों रुपये पूजा–पाठ में खर्च किये, पर राजकुमार अच्छा नहीं हुआ।'' यही चिन्ता करते–करते राजा को नींद आ गयी। राजा ने स्वप्न में एक दिव्यरूपा स्त्री के दर्शन किये। वह कह रही थी – ''राजा, चिन्ता न करो, राजकुमार के खाने–पीने की व्यवस्था करो। गर्म वस्तुएँ, तेल, घी आदि खाने को न दो, शुद्धता से रखो। वह ठीक हो जायेगा।'' दूसरे दिन से देवी के कथनानुसार प्रबन्ध किया गया। धीरे–धीरे राजकुमार अच्छा होने लगा, तब राजा ने देवी पूजा धूमधाम से की और चैत्र की अष्टमी को प्रजा को देवी पूजा करने का आदेश दिया।

प्रायः देखा जाता है कि चैत्र मास में ही शीतला का प्रकोप होता है। यह देवी तामसी प्रकृति की हैं। इनका भोग ठंडे पदार्थों से लगाया जाता है तथा चैत्र कृष्ण पक्ष में अष्टमी की पूजा की जाती है। हम लोगों के यहाँ देवी पूजा का दिन सोमवार माना जाता है। पर अष्टमी किसी भी वार को हो तो उसी दिन देवी पूजा होती है।

४२–सूर्यदेव की कथा

सूर्यदेव संसार के पालनकर्ता माने जाते हैं। ये समस्त जीवों की

जीवन–व्यवस्था करते हैं। पर इनके गृह की दशा बड़ी ही शोचनीय थी, सास–बहू में पटती ही नहीं थी। इससे सूर्यदेव घर पर नहीं रहते थे। वे धन–दौलत का बँटवारा करके घर से चले गये – आधा राज्य प्रजा को, आधा सास–बहू को। सास से छिपकर बहू खाती, बहू से छिपकर सास खाती। यही क्रम १२ वर्ष तक चलता रहा। न कभी व्रत किया, न पुण्य–दान किया। प्रजा तो नियमपूर्वक रहकर दान, धर्म करती रही। धर्म कार्यों में तत्पर रहने के कारण उसको सब सुख–सुविधा रही। यह देख–देख कर सास–बहू को बहुत ईर्ष्या होती थी क्योंकि उनके पास खाने तक को न रहा था। एक दिन बहू ने सास से कहा – ''अपने बेटा से जाकर कहो कि धन का बँटवारा कैसे किया था कि हम दोनों ही भूखों मर रही हैं। सारी प्रजा आनन्द में है, प्रजाजन खूब खाते–पीते हैं।'' सूर्य जी की माँ घर से चलीं, न पहनने को कपड़े, न पैर में जूते। सूरज जी की नगरी में पहुँची, तो उनके द्वारपालों ने उनको माँ के आने समाचार दिया और बताया, ''वे फटे–चिथड़े वस्त्र पहने हैं, बाल बिखरे हैं, नंगे पैर हैं।'' सूरज ने टूटे–फूटे महल में उन्हें ठहराने की आज्ञा दी। रात्रि के समय वे माँ से मिलने गये। पूछा – ''माँ ! कैसे आयी ?'' माँ ने उत्तर दिया – ''बेटा ! राजा–प्रजा खायें, पियें, आनन्द करें। हम सास–बहू भूखी उठें, भूखी पड़ें।'' सूर्यदेव बोले – ''मैंने तो सारी प्रजा के समान ही आप दोनों को दिया था पर तुम्हारी यह दुरवस्था है ! मेरे पास पाँच सोने के गुट्टे हैं, इन्हें ले जाकर बहू को दे देना, वह सखी–सहेलियों में जाकर खेलेगी।'' माँ लौट आयी। राह में सोचती रही, ''बेटा ने खाने की व्यवस्था तो नहीं की और बहू को खेलने को गुट्टे दे दिये; वैसे ही कुछ काम नहीं करती थी।'' सास के आते ही बहू उसके आगे–पीछे घूमने लगी। उसे चिन्ता थी कि सास जाने क्या–क्या लायी होगी। सास ने कहा – ''जो लायी हूँ तेरे ही लिये है।'' सवेरा होने पर सास ने बहू से कहा कि नहा ले। बहू नहाकर आयी, तो पाँचों गुट्टे देकर सास ने कहा – ''ये बेटा ने दिये थे, सखी–सहेलियों में जाकर खेल।'' चमचमाते गुट्टे पाकर बहू खुश हुई और रनवास में जाकर रानियों से कहा – ''आओ बहन, गुट्टे खेलो।'' रानियों ने कहा – ''हमें खेलने का अवकाश नहीं है।'' वह लौटकर प्रजाजनों के घर जाकर बोली, आओ बहन, गुट्टे खेलो, पर उन्होंने भी कहा – ''हमारे पास तो बहुतेरे काम हैं। हम घर में झाड़ू–बुहारी करेंगी, चौका–चूल्हा देखेंगी, बाल–बच्चों को सम्भालेंगी, सास–ससुर,

देवर–जेठ तथा पति को भोजन खिलायेंगी, अवकाश मिलेगा, तो सिलाई–पोवाई करेंगी। तू ठाली है, गुट्टा खेल।'' यह सुन बहू को बड़ी लज्जा आयी। वह घर लौट आयी। १२ वर्ष का कूड़ा साफ किया, तेरह वर्ष से बिना–पुता चूल्हा पोता। एक गुट्टा लेकर बाजार गयी, दाल, चावल और हाँडी लायी, चूल्हा जलाकर दाल–चावल पकाये और देवी–देवताओं का नाम लेकर भोग लगाया। थाली परोसकर वह सास को बुलाने गयी। सास ने सोचा – आजतक तो इसने कभी खाने को पूछा भी न था, पर आज बुलाने आयी है।

सास रसोई में पहुँची बहुत दिनों बाद भोजन मिला था, अतः खूब छककर खाया। सास के भोजन कर चुकने पर बहू ने खाया। भोजन बहुत बचा था, दूसरे दिन के लिए रख दिया। दूसरे दिन भी दोनों ने खाया, पर तब भी न चुका। तीसरे दिन खाने पर बचा ही रहा, तब बहू सास से कहने लगी – ''बासी खाया, तेवासी खाया, चौवासी तो सुकरी–कुकरी भी नहीं खातीं।'' वह बचा हुआ बासी भोजन कोठे के पीछे जाकर फेंक आयी। जब सवेरा हुआ तो सास ने पूछा – ''जहाँ तू कल कूड़ा फेंक आयी थी बटोर आऊँ, नहीं तो देखने वाले कहेंगे कि यहाँ कूड़ा फैला गयी है।'' सास झाड़ू लेकर बटोरने गयी, तो देखा कि जितने दाल के कण थे उतने सोने के डले, जितने चावल पड़े थे उतने चाँदी के डले हो गये हैं। सास ने उन्हें उठा–उठा कर घर में रखा। जितने उठाकर वह रखती जाय उतने ही फिर बढ़ जायें। तब सास कहने लगी – ''इस धन का क्या करें ?'' ''अपने बेटे से पूछकर आओ,'' बहू बोली। सास ने पालकी मँगाई, जिसको चार कहार आगे से और चार कहार पीछे से कंधों पर उठाये हुए थे। पिताम्बर पहन कर वह सूरजदेव की नगरी में पहुँची। द्वारपाल ने खबर दी, तो सूरजदेव ने माँ को अपने महल में बुलाया, पर वह उसी टूटे–फूटे महल में ठहरी। सूरज जी ने माँ को प्रणाम करके पूछा – ''माँ, अब कैसे आना हुआ ? क्या कष्ट है ?'' माँ ने कहा – ''बेटा धन तो दिया इतना दिया कि न उठाया जाय न धरा जाय, खायें भी तो कहाँ तक खायें।'' सूरज जी ने कहा – ''माँ धन की क्या सराहना, दान का क्या बिसारना ! खूब दान–धर्म करो, कुआँ–बावड़ी खुदवाओ, क्वाँरी कन्याओं का ब्याह करो, ब्याही का गौना करो, सदाव्रत खोल दो, कोई भूखा–नंगा न रहे। तेरा भी नाम होगा साथ में मेरा भी नाम होगा।'' लौटकर माँ ने सारी व्यवस्था कहे–अनुसार कर दी। थोड़े दिन बीतने पर सूरज जी भिक्षुक के वेश में नगर के कुआँ पर आकर

बैठे और पानी भरने वाली पनिहारियों के कंकड़ मारने लगे। एक पनिहारी ने कहा – "वहाँ जाओ जहाँ अधसेरी भीख मिलती है।" वे उससे पता पूछकर वहाँ पहुँचे। "सत्यमाई सीताराम" की आवाज लगायी। एक बाँदी आटा–घी देने आयी, पर उन्होंने नहीं लिया और कहा – "मैं तो, जो भोजन चेता सूरज खाते हैं, वह भोजन लूँगा।" बुढ़िया ने खाजा व फेनी बनाकर दिया, खा–पीकर वे बैठे रहे। रात हो गयी, तो उन्होंने कहा – "मेरे सोने का स्थान बताओ।" बुढ़िया ने कहा, "मैं रात में किसी को नहीं ठहराती।" भिक्षुकवेशधारी सूर्यदेव ने कहा – "मेरा तो यह नियम है, जहाँ गासा वहीं वहीं वासा। इसी द्वार पर पड़ा रहूँगा। तुझे ब्रह्महत्या लगेगी।"

हत्या के डर से बाँदी को बुढ़िया ने आज्ञा दी कि टूटी खाट, पुरानी गुदरी दे दे, पर उन्होंने न लिया और बोले – "चेता सूरज के पलंग पर सोऊँगा।" बुढ़िया ने बैठक खुलवा दी, वहीं पलंग पर वे सो रहे; आधी रात को पेट में दर्द का बहाना करके 'हाय ! हाय !' पुकारने लगे। बुढ़िया ने बाँदी को अजवायन का फंका और पानी लेकर भेजा, तो वे कहने लगे, "बाँदी के हाथ नहीं लूँगा। मालकिन के हाथ से लूँगा।" बुढ़िया ने बहू को समझाया – "घूँघट खोलियो मत, मुँह से बोलियो मत, पानी का लोटा जमीन पर रखना, अजवायन का फंका हाथ पर डालकर चली आ।" सूरजदेव ने अजवायन का फंका बिखेर दिया और पानी का लोटा उँड़ेल कर बहू का हाथ पकड़ लिया। बहू ने कहा – "तुम कौन हो, तुम्हारी इतनी हिम्मत !"

सूरजदेव ने अपना परिचय दिया। बहू ने पूछा – "तुम इस वेश में क्यों आये। तुम्हारी माँ कैसे विश्वास करेगी, मेरी बदनामी होगी।" सूरजदेव ने कहा – "न माने न सही, नवें महीने पुत्र होंगे उनके नाम शुक्र, शनिश्चर रखना। उनके लिए सोने की गेंद–गुल्ली बनवा देना, वे उससे खेला करेंगे।" सवेरे सास ने बहू को घर में न पाया, तो बाँदी के द्वारा बुलवाया। सूरजदेव तो चले गये थे। बुढ़िया ने बहू का बहुत अपमान किया, कहा – "मैंने कभी घर के पुरुष भी न देखे थे और तूने मँगता–भिखारी भी नहीं छोड़ा। ऐसी बहू का मेरे घर में क्या काम।" बहू ने सब प्रकार सफाई दी, पर सास ने उसे घर से निकाल ही दिया।

एक सूखा बाग था, वहीं जाकर वह बैठ गयी। पास खेलते बच्चों ने माली से जाकर कहा – "माली तेरा बाग हरा हो गया है।" दुःखी माली कहने लगा –"मेरा बारह वर्ष का सूखा बाग कैसे हरा हो गया ? बेटा, तुम क्या हमारी

हँसी कर रहे हो।" पर बच्चों के आग्रह पर माली ने आकर देखा, तो सारा बाग फूल–पत्तियों से हरा–भरा है। माली घूम–घूमकर बाग की शोभा देखने लगा। एक पेड़ के नीचे एक स्त्री को बैठा देखकर पूछा – "तू भूत है या प्रेत, दैत्य है या देव, तेरे आने से मेरा बाग हरा–भरा हो गया।"

स्त्री ने कहा – "मैं एक दुखिया हूँ, बैठने दे तो बैठूँ, नहीं तो कहीं और चली जाऊँ। माली ने कहा – "तेरे आने से तो मेरे भाग्य खुल गये हैं। तू यहीं पर रह।" स्त्री ने कहा – "मैं तेरी पत्नी बनकर तो रहूँगी नहीं, पुत्री बनकर रह सकती हूँ। न जूठा खाऊँगी, न जूठा उठाऊँगी, और न किसी की सेज बिछाऊँगी, न उठाऊँगी।" माली इन शर्तों को मानकर उसे अपने घर लिवा ले गया। वहाँ उसे मालिन ने पुत्री के समान रखा। नौ महीने बीतने पर उसके जुड़वाँ पुत्र हुए। बड़े होने पर सोने के बने गेंद–गुल्ली से दोनों पुत्र बच्चों के साथ खेलते फिरते थे। सूरजदेव एक दिन उसी स्थान पर पहुँचे। गेंद– गुल्ली रखकर जाते समय वे बच्चे कह रहे थे, "जो हमारी गेंद–गुल्ली के हाथ लगाये उसे चेता सूरज की आन।" सूरजदेव ने पूछा – "तुम किसके पुत्र हो।" बच्चों ने बताया – "कुंजबिहारी दादा–दादी, मानक–मोती, फूफा–फूफी, चेता सूरज पिता, चंद्रवल मेरी माँ का नाम है। मालिन–माली मेरे नानी–नाना हैं।" परिचय पाकर वे माली के द्वार पर बच्चों के साथ गये और कहा "ऐ बच्चों ! अपनी माँ को बुला लाओ।" बच्चे दौड़कर माँ के पास गये और कहा – "माँ, सूरजदेव बुला रहा है।"

माँ ने सोचा – "एक लोग की निकाली तो ये दिन देखा, आज दूसरा लोग क्या कहने आ गया।" उसने बच्चों से कहा – "उसको यहीं बुला लाओ।" सूरजदेव गये। दोनों ने एक–दूसरे को पहचाना। जब माली को खबर लगी, तो प्रसन्नतापूर्वक फूल–फल देकर बेटी को विदा किया। पालकी में बैठाकर बेटों सहित बहू को लेकर सूरजदेव माँ के द्वार पर पालकी खड़ी करके भीतर पहुँचे। माँ बेटे को आया देख बड़ी प्रसन्न हुई। माँ के पैर छूकर वे बैठ गये। इधर–उधर देखकर माँ से पूछा – "माँ, बहू कहाँ है ?" बुढ़िया घबराकर बोली – "बेटा सखी–सहेलियों में बैठी होगी।" कुछ देर बाद उसने फिर पूछा – "माँ, तेरी बहू कहाँ है ?" माँ ने उत्तर दिया – "बेटा, रसोई में होगी या कुआँ पर होगी अन्यथा पीहर गयी होगी।" ऐसे अटपटे उत्तर सुनकर सूरजदेव ने कहा – "माँ, यदि सखी–सहेलियों में गयी है, तो इशारे से बुला लाऊँ। यदि रसोई में है, तो भोजन कर लूँ। यदि

पीहर गयी है, तो पालकी में बिठाकर लिवा लाऊँ।'' तब माँ ने सब बीता वृत्तांत कह सुनाया। सूरजदेव ने हँसकर कहा – ''मैं ही छद्म–वेश में आया था तुम्हारी परीक्षा लेने।'' माँ ने कहा – ''बेटा, मैंने तो नहीं पहचाना और बहू का भी विश्वास न करके उसे घर से निकाल दिया था।''

''माँ, यदि उसे लाऊँ, तो तू उसे रखेगी या नहीं,'' सूर्यदेव ने पूछा। माँ ने कहा – ''पहले आँखों पर रखती थी, तो अब पलकों पर रखूँगी।'' पालकी में से बेटों सहित बहू को उतारकर सूरजदेव भीतर ले आये। बहू ने सास के पैर छुए, बच्चों ने दादी को दंडवत् प्रणाम किया। सास ने अपने पौत्रों और पुत्र–वधू को आशीष दी। सब परिवार सुखी हुआ।

दूसरी कहानी – सूरजदेव संसार भर की पूरना कर के रात को घर लौटते, तो अपनी पत्नी से कहते – ''सारे संसार का भरण–पोषण करके आया हूँ।'' उनकी स्त्री को उनके इस कहने का विश्वास नहीं होता था। यही सोचा करती थी कि कहीं एक पुरुष सारे संसार का भरण–पोषण कर सकता है। इसी असमंजस में एक दिन अपनी सहेलियों के बीच यही बात कहने लगी। उनकी सहेलियों ने कहा, ''परीक्षा करके देख लो। एक डिबिया में चींटी बंद कर दो और देखो कैसे उसका भरण–पोषण होगा।'' उसने ऐसा ही किया। जब वह देवपूजा कर चुकी, तो एक चींटी पकड़कर डिबिया में बंद कर दी और सुरक्षित स्थान पर रख दी। रात्रि होने पर सूर्य भगवान घर लौटे, तो वह मुस्कुराने लगी। सूर्यदेव ने हँसने का कारण पूछा, तो कहने लगी – ''भोजन के उपरांत बताऊँगी।'' पर सूर्य भगवान ने पहले ही बताने का आग्रह किया।

झटपट डिबिया लाकर कहा – ''देखिए, हमारा एक जीव तो भूखा ही है। आप सदा कहते हैं कि संसार की पूरना करके आता हूँ।'' पर आश्चर्य, डिबिया में आधा चावल पड़ा था। आधा चावल खाकर चींटी घूम रही थी। उनकी पत्नी सहम गयी, सूर्य भगवान ने हँसकर बताया, ''पूजा के बाद तुमने अपने माथे पर टीका लगाकर अक्षत लगाया था। इसके भाग्य का भोजन (चावल) डिबिया बन्द करते समय उसमें गिर गया, उससे उसका निर्वाह हुआ।''

तबसे उनकी स्त्री को विश्वास हो गया कि सूर्य भगवान हाथी को मनभर, चींटी को कणभर देने की व्यवस्था करके ही आते हैं।

सूर्यदेव ने बताया – ''कोई पापी दुखियारा ही भूखा रहता है; मैं तो सारे संसार के भोजन का प्रबन्ध करके ही आता हूँ।''

४३—दशारानी की पूजा (दसिया)

दसिया – हमारे यहाँ होली के अवसर पर कच्चे सूत की कुकड़ी, हल्दी की २ गाँठें, हरे जौ की ५ बालियाँ होली की लपट में दिखाकर रखते हैं। धुलेंड़ी के दिन सवा हाथ लम्बे कुकड़ी के सूत से १० तार पूरकर स्त्रियाँ अपने लिए दसिये तैयार करती हैं। लड़कियों के लिए ५ तार के दसिया बनाती हैं तथा लड़कों के कमर में बाँधने की तागड़ी ६ तार की, जब तक जनेऊ न हो, बनाकर बाँधी जाती है। दसिया हल्दी को पानी में घिसकर बने रंग से रंगे जाते हैं और स्त्रियाँ इसको बायें हाथ में बाँधती हैं। लड़कों के कमर में तागड़ी बाँधी जाती है। दसिया खोलने का दिन बैसाख मास के कृष्ण पक्ष की छठ, सतमी, दसवीं और चौदस तिथियों को छोड़कर कोई भद्रारहित तिथि होनी चाहिए तथा दिन शनिवार, वृहस्पतिवार या सोमवार का अच्छा माना जाता है।

दशारानी की पूजा की आवश्यकता – हमारे महर्षियों ने अपने अनुभव से सिद्ध किया है कि मनुष्य अथवा किसी भी वस्तु की स्थिति में सहसा परिवर्तन अलौकिक शक्ति के द्वारा होता है। उसी शक्ति का नाम ''दशा'' है। इसे अनुकूल रखने के लिए स्त्रियाँ दशारानी की पूजा करती हैं। नये वर्ष में सुखी–सम्पन्न रहने के निमित्त यह पूजा की जाती है जिससे हमारा नववर्ष सुखपूर्वक व्यतीत हो।

अन्तर्कथा – एक सास–बहू थीं। दोनों ने दशारानी की पूजा करके डोरा खोला ही था कि सास का बेटा, जो परदेश गया हुआ था, उसी समय परदेश से लौटा। बहू जल्दी से (पतिदर्शन की इच्छा से) प्रसाद का निरादर कर थाली छोड़कर उठ आयी। इस अपराध से दशारानी क्रुद्ध हो गयीं। उसका पति उससे नाराज हो गया और बहू को घर से निकाल दिया। घर से निकलकर वह जंगलों में भटकती फिरी। रात को अंधेरे में वह एक अंधे कुएँ में गिर पड़ी।

राजा नल जंगल में शिकार खेलने गये थे। उन्हें प्यास लगी, तो वे कुआँ पर पानी पीने की इच्छा से गये। कुआँ में डोल–रस्सी डाली। कुआँ में पड़ी स्त्री ने रस्सी पकड़ ली। उन्होंने झाँककर देखा तो कुआँ में स्त्री दिखाई दी। राजा ने उसे निकाला और बहन मानकर अपने साथ ले गया। राजा के कोई बहन नहीं थी, रानी को ननद के आने से बड़ी प्रसन्नता हुई।

कुछ दिनों बाद दशारानी की पूजा का दिन आया, तो मुँहबोली बहन ने कहा – ''भाभी, क्या तुम भी दशारानी की पूजा करोगी ?'' रानी ने कहा – ''कैसे पूजा होती है ? क्या खाया जाता है ?'' राजा की मुँहबोली बहन ने बताया – ''पीपल के पेड़ के नीचे पूजा होती है और फीकी पूरी और लपसी से पारण होता है।'' रानी बोली – ''मुझसे यह पूजन न हो सकेगा। मैं खीर, रबड़ी, हलुआ, पूरी इत्यादि अनेक व्यंजन खाने वाली हूँ; ईश्वर की कृपा से मेरे पास सब कुछ है। मुझे क्या चाहिए, मैं क्यों पूजा करूँ ?'' ऐसे अपमानयुक्त वचनों से दशारानी रुष्ठ हो गयीं। उसी रात राजा को स्वप्न हुआ – ''राजा, मैं तेरे घर से जा रही हूँ।''

अब मुँहबोली बहन का हाल सुनिए। उसने दशारानी की विधिवत् पूजा की थी, इससे दशारानी प्रसन्न हुईं उसके पति को अपनी पत्नी के ढूँढ़ने की चिन्ता हुई। वह ढूँढ़ता घूम रहा था कि किसी ने बताया कि राजा के साथ एक स्त्री आयी है, वह राजमहल में राजा की बहन होकर रहती है और बड़े अच्छे स्वभाव की है।

वह राजा नल के द्वार पर जाकर पूछताछ कर ही रहा था कि मुँहबोली बहन की निगाह उस पर पड़ गयी। वह उसे देखकर हँसने लगी। रानी ने उसे हँसते देखकर पूछा – ''ननद जी तुम्हारे हँसने का क्या कारण है'', तो उसने सब बात बता दी। आदर सहित पतिदेव घर में बुलाये गये, खूब आदर–सत्कार हुआ। राजा नल ने बहुत धन–दौलत देकर बहन को विदा किया। दशारानी की कृपा से वह अपने घर जाकर आनन्द से रहने लगी।

ऐसा संयोग हुआ कि उसी दिन राजा के भाई ने उन्हें जुआ खेलने को बुला भेजा। दिनभर जुआ होता रहा। राजा नल सारा राज–पाट जुआ में हार गये। उनके भाई ने नगर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो कोई नल की सहायता करेगा, उसे मैं देश–निकाला दे दूँगा।

सवेरे जब राजा नल सोकर उठे, तो घर के सब नौकर–चाकर चले गये थे। उन्होंने अपने हाथ कुआँ से पानी निकालकर स्नान किया, न चौकी मिली, न कोई वस्त्र या पात्र ही मिला। उन्होंने रानी से कहा – ''चलो यहाँ से।'' बच्चों को ननिहाल छोड़ा और आप दोनों जंगल की तरफ चल दिये। चलते–चलते एक बस्ती में पहुँचे वह उसी मुँहबोली बहन का गाँव था।

राजा के आने का समाचार मुँहबोली बहन ने सुना, तो वह बहुत प्रसन्न हुई और एक थाल में मोती भरकर भाई–भावज को भेंट में देने को लायी।

भाई ने थाल उघाड़कर देखा तो कंकड़–पत्थर भरे थे। उन्होंने एक पेड़ के नीचे गड्ढा खोदकर उसमें थाल गाड़ दिया और वे वहाँ से चल दिये।

राजा आगे चलकर एक मित्र के घर ठहरे। उन्होंने उन्हें अपने महल में ठहराया। राजा सो गये, पर रानी को नींद नहीं आयी। देखती क्या है कि खूँटी पर टँगे नौलखा हार को मोर का चित्र निगल रहा है। रानी ने राजा को जगाकर दिखाया। चोरी लगने के डर से दोनों वहाँ से उठकर चल दिये। सवेरा हुआ, मित्र ने देखा कि राजा नल नहीं हैं। सखा की पत्नी ने कहा – ''मेरा नौलखा हार खूँटी पर टँगा था। वही चुराकर वह चला गया है।'' मित्र ने कहा – ''ले गया, तो ले जाने दो, वह मेरा मित्र था।'' राजा–रानी चलते–चलते एक माली के स्थान पर आये। उसने इन दोनों को अपने पास रख लिया। राजा को बाग में पानी देने का काम सौंपा तथा रानी को राजमहल में फूल–माला पहुँचाने का काम दिया। एक दिन राजा कुआँ पर चरस से पानी निकाल रहे थे, पानी के साथ जौ की बाली व कच्चे सूत की कुकड़ भी निकली। राजा ने वे फिर उसी में डाल दीं। दुबारा फिर वे निकलीं, पास खड़ी रानी ने राजा से कुकड़ी ले ली और कहने लगी मुँहबोली बहन की बतायी दशारानी की पूजा मैं भी करूँगी। अतः डोरा बाँध दिया। जब डोरा खोलने का समय आया, तो मालिन से कहा – ''मालिन माँ, रोज मुझे जौ देती हो, कल मुझे गेहूँ देना, रोज तेल देती हो, कल घी देना, नमक की जगह गुड़ दे देना।''

मालिन ने कहा – ''बेटी कल तू ही फूलमाला लेकर रनिवास में जाना, वहाँ राजकुमारी जयमाल डालेगी।''

दूसरे दिन रानी हार–माला गूँथकर डलिया में सजाकर राजमहल में ले गयी। वहाँ से बहुत–सा अनाज, गुड़, घी और रुपये लेकर आयी और मालिन माँ को दिये, तो उसने कहा – ''जो मिला तेरे भाग्य का है, तू ही रख।'' उसी सामग्री से रानी ने दशारानी की पूजा की। इससे दशारानी प्रसन्न हो गयीं।

शाम को जयमाल उत्सव देखने राजा नल भी गये। देश–विदेश से राजा और राजकुमार एकत्रित थे। राजकुमारी हाथ में माला लिये और साथ की सखियाँ योग्य वृद्धजन उसे उपस्थित राजाओं की बड़ाई–उपाधि आदि बताते चल रहे थे। राजकुमारी एक–एक राजा को देखती वह उनकी विभूति सुनती हुई धीरे–धीरे बढ़ रही थी। जब वह राजा नल के पास पहुँची तो

उसी के गले में जयमाल डाल दी। राजकुमारी का भाई यह देखकर बहुत नाराज हुआ। उपस्थित जनसमूह में हलचल मच गयी। अतः उस माली के सेवक को बाहर निकाल देने की आज्ञा दी गयी। राजा नल को फाटक से बाहर कर दिया गया। दूसरी बार जयमाल डालने का प्रस्ताव रखा गया, पर राजकुमारी ने सब राजाओं और राजकुमारों छोड़कर फाटक के बाहर खड़े नल के गले फिर जयमाल डाली। राजा नल चक्रवर्ती सम्राट् के चिह्नों से युक्त थे, यही देखकर राजकुमारी ने उनके गले में जयमाल डाली थी। पर उनका वेश चाकर का सा था, इसी से राजकुमारी का भाई उनसे बहन का विवाह करना उचित नहीं समझता था। अतः एक कटखना घोड़ा मँगाया गया और उस पर उल्टी जीन कसकर उसे तैयार किया गया। राजा नल से कहा गया कि इस पर चढ़कर बायें हाथ से यदि हिरन मारकर लाओगे, तभी राजकुमारी से तुम्हारा विवाह हो सकेगा। उनका दाहिना हाथ पीठ की ओर करके बाँध दिया गया।

राजा नल घोड़े की पीठ थपथपाकर उस पर चढ़ गये और बायें हाथ से तीर चलाकर सुन्दर हिरन का शिकार कर लाये। शर्त के अनुसार राजकुमारी का विवाह राजा नल से हो गया। दोनों आनंदपूर्वक घर लौटे। एक दिन वर्षा हो रही थी बिजली कड़क रही थी। इसे देखकर राजा नल कहने लगे – "अरे ! हमारे देश की ओर ही बिजली चमक रही है।" तब राजकुमारी पूछने लगी – "क्या तुम्हारे भी देश है ? वहाँ तुम्हारा राज्य है, सत्य–सत्य कहो। तुम यहाँ क्यों रहते हो ?" तब नल को उसे सारा वृत्तांत सुनाना पड़ा। कुछ दिनों बाद दशारानी की कृपा से उनके दिन फिरे। नल के भाई का देहान्त हो गया था। वहाँ के राज्यकर्मचारी अपने राजा को ढूँढ़ते–ढूँढ़ते उधर आये। अपने राजा को पाकर वे बहुत प्रसन्न हुए और वे उनसे देश लौट चलने का आग्रह करने लगे। राजा ने माली–मालिन से विदा माँगी और अपनी दोनों रानियों–सहित स्वदेश को चले। राह में वे उसी मित्र के घर ठहरे। उन्हें देखकर मित्र की पत्नी ने कहा, "मेरा नौलखा हार ले गया था उसी से बन–ठन कर आया है। राजा नल उसी स्थान पर रात्रि में सोये, तो देखा कि वह लकड़ी की मोरनी वाली खूँटी हार उगल रही है। यह नल ने मित्र को दिखाया, मित्र ने पश्चाताप करके क्षमा माँगी, फिर मुँहबोली बहन से भेंट की और पेड़ के नीचे से थाल खोदकर करके बहन को दिखाया और बताया – "मेरे दुर्दिन थे, इसलिए तुम्हारे दिये मोती भी

कंकड़ हो गये थे।" वहाँ से वे अपने राज्य को लौटे, उनकी प्रजा ने लाव–लश्कर के साथ धूम–धाम से राजा को आते देखा, तो घबराने लगी। लोग समझे कि कोई दूसरा राजा हमारे देश पर चढ़ाई करने आ गया है। सब भयभीत होकर इधर–उधर दौड़–भाग करने लगे और अपने बचाव का प्रबन्ध करने लगे। नगर में पहुँचकर राजा ने प्रजा को अभयदान दिया। प्रजा ने अपने राजा को पहचानकर एकत्रित होकर उनका स्वागत–सत्कार किया।

प्रजा में खुशियाँ मनायी जाने लगीं। इस प्रकार दशारानी की कृपा से राजा नल व रानी को फिर से राजपाट मिला और सब आनंद–मंगल हो गया।

४४—सत्यनारायण की पूजा, व्रत और कथा

संसार में सत्य के बराबर कोई दूसरा धर्म, व्रत या नियम नहीं है। सत्य को ईश्वर का स्वरूप ही माना गया है। सत्य का व्रत रखने वाला व्रती कहलाता है। सत्य का संकल्पपूर्वक व्रत (नियम) निभाने वाला ही सच्चा ईश्वर–उपासक है।

सत्यनारायण की पूजा आरम्भ करने से प्रथम गणेश जी की निम्न वंदना करके पूजन करें :

गणानां त्वा गणपति गंगवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति गंगवामहे निधिनां त्वा निधिपति गंगवामहे वसो मम आहम जानि गर्भधमात्वामा जासि गर्भधम्।

पूजा विधि – व्रत का निश्चय करके दाहिने हाथ में जल लेकर तीन बार आचमन करें। आचमन मंत्र –

ॐ शन्नोदेवी रभिष्टये आपो भवन्तु पीतये शय्यो रभिरत्रन्तुनः।

फिर शरीर पर जल छिड़ककर शुद्धि करें। तत्पश्चात् सत्यरूप ईश्वर की हाथ जोड़कर प्रार्थना करें।

प्रार्थना – **स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवः स्वस्ति नः पूषा विश्वावेदाः स्वस्ति न स्ताक्षर्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु।**

धूप सुलगाकर, दीप जलाकर सुचित होकर ध्यान करें। 'हे दयामय परमपिता परमात्मा, मेरे हृदय में निवास करो, मुझे शक्ति दो, बल दो जिससे

मैं दृढ़ संकल्प करके आपके सत्यस्वरूप का अवलम्बपूर्वक पालन करता रहूँ। आप संसार के पालक, रक्षक, कर्ता, भर्ता और आदिस्वरूप हैं। आप तीनों लोकों के स्वामी हैं; मेरे हृदय में वास करके मुझे सद्बुद्धि दें।''

इस प्रकार प्रार्थना करके सत्यनारायण भगवान को पुष्प का आसन देकर विराजमान करें और शुद्ध जल अथवा गंगाजल से आचमन करायें। दूध, दही, घी, शहद, शक्कर से क्रम से भगवान को स्नान करायें और गंगाजल से शुद्ध स्नान कराके वस्त्र अर्पण करें। जनेऊ, चंदन, माला, पान, पुष्प चढ़ायें, धूप, दीप से आरती करें तथा परिक्रमा कर उत्तम फल, पंजीरी, मिठाई आदि का भोग लगाकर पुष्पांजलि दें, उनका गुणानुवाद करें। नामकीर्तन करके सबको भोग–प्रसाद वितरण कर व्रत सम्पूर्ण करें। इस व्रत का कोई दिन निश्चित नहीं है, जब इच्छा हो श्रद्धापूर्वक व्रत रखकर पूजा करें। प्रायः लोगों ने पूर्णमासी का दिन इस पूजा के लिए निश्चित कर रखा है। व्रत–पूजा में श्रद्धा–भक्ति उत्पन्न करने के लिए कथावाचकों ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों वर्णों द्वारा पूजन करने के उदाहरण भी वर्णन किये हैं। सत्यनारायण की कथा सुनकर मनुष्यों में श्रद्धा–भक्ति उत्पन्न हो जायेगी। पूजा के बाद उचित समझें और श्रद्धा हो, तो हवन भी करें। हवन से हृदय शुद्ध होता है, घर की हवा पवित्र होती है और देवगण तो आहुति पाकर प्रसन्न होंगे ही।

४५–एकादशी व्रत

साल में २४ एकादशी होती हैं – १२ कृष्ण पक्ष में और १२ शुक्ल पक्ष में। प्रति तीसरे वर्ष भारतीय पंचांगानुसार १ महीना बढ़ जाता है जो पुरुषोत्तम मास, अधिक मास या मलमास के नाम से जाना जाता है। इसमें भी दो अतिरिक्त एकादशी होंगी। एकादशी व्रत करने का विधान इस प्रकार बताया गया है – प्रथम दिन दशमी तिथि को एक बार भोजन करें। यदि एक बार भोजन करके रहने की शक्ति या इच्छा न हो, तो दूसरी बार हल्का भोजन करें और प्रातः उठकर नित्यकर्म से निपटकर व्रत संकल्प करें कि आज मैं एकादशी व्रत रखूँगा। दिन भर के गृहस्थी के कार्यों से बचा समय पूजा, भजन, कीर्तन, ध्यान में व्यतीत करें। निराहार व्रत न रहा जाय, तो सायंकाल में फलाहारी पदार्थों से पारण करें और रात्रि को भी भगवान का ध्यान–भजन करते हुये शयन करें। दूसरे दिन प्रातः नित्यकर्मों से निपटकर

कुछ अन्न आदि दान करके भोजन करें। इस प्रकार नियमपूर्वक व्रत करते रहने से पेट के विकार दूर होते हैं और आत्मशुद्धि होती है। हमारे नीति–शास्त्रों ने इस व्रत को धार्मिक रूप दिया है, साथ ही व्रत करने से शारीरिक विकार तो दूर हो ही जाते हैं।

४६–पुरुषोत्तम मास–लौंद, मलमास का वर्णन

हमारे ज्योतिषशास्त्रियों ने पृथ्वी की परिक्रमा की गणना चंद्रमा तथा सूर्य के अनुसार की। उनके अनुसार पृथ्वी की परिक्रमा चंद्रमास के हिसाब से ३५४ दिन ५ घंटे ४५ मिनट में होती है और नक्षत्र (सूर्य के अनुसार) मास से पृथ्वी की परिक्रमा ३६५ दिन ६ घंटे लगभग ६ मिनट में होती है। दोनों का अंतर १० दिन १७ घंटे २० मिनट ३७ सेकेंड होता है। अतः हर तीसरे साल (लगभग ३२ महीने बाद) १ महीना बढ़ाया गया है। यही मलमास, लौंद, पुरुषोत्तम मास कहलाता है।

प्राचीन कथा – प्राचीन समय में इस महीने को सब लोग अशुभ महीना मानते थे। इस मास में विवाह आदि शुभकार्य नहीं करते थे, इससे यह महीना बहुत दुखी होकर देवताओं के पास जाकर अपना दुःख कहने लगे। उन्होंने उसे धीरज बँधाया और उसे साथ लेकर विष्णुलोक को गये। सब हाल जानकर विष्णु भगवान उनसे बोले – ''हे देवगण ! तुम इसकी सहायता करो, मैं इसे अपने नाम के अनुरूप पुरुषोत्तम नाम की उपाधि देता हूँ। इस मास में जो उत्तम आचार–विचार रखकर तथा दान–धर्म, पूजा–पाठ, प्रातः उठकर नदी, तालाब या कुआँ के जल या जो शुद्ध जल मिले उससे स्नान करके भगवत्–भजन, संध्या, हवन आदि करके अपने नित्य कार्य करेगा, वह मोक्ष प्राप्त करेगा। वह झूठ न बोले, किसी को दुखी न करे, नित्यप्रति भूखे को यथाशक्ति भोजन दे, गौ–ग्रास और पंच–ग्रास करके परिवारसहित भोजन करें। यदि कोई फल, कंद आदि खाकर निर्वाह कर सकें तो उत्तम है, अन्यथा माँस, मदिरा, प्याज, लहसुन, उड़द, मसूर, शहद, राई, मूली, गाजर, नशे की चीजें न खायें; सूतक का, बासी और चमड़े में रखा पदार्थ न खायें।''

भगवान का प्रसाद व चरणामृत लेकर भोजन करें। पान लगाकर लौंग, इलायची डालकर भगवान को भोग लगायें तथा खायें, लड्डू दान करें, कांसे के पात्र में पुआ रखकर योग्य एवं सुपात्र ब्राह्मण को दान दें। सुहागिन

स्त्रियाँ लाल कपड़े से ढँककर तथा पुरुष और विधवा सफेद कपड़े से ढँककर दान करें।

जोड़े से ब्राह्मण–ब्राह्मणी को जिमायें, वंशलोचन दक्षिणा में दें। इस व्रत को सब जातियों के लोग कर सकते हैं। शूद्र को जनेऊ पहनने व ओंकार गायत्री जप का अधिकार नहीं है।

४७—आँवला की एकादशी

यह एकादशी माघ मास में होती है। इस दिन आँवला वृक्ष का पूजन किया जाता है। आँवला का दान किया जाता है और आँवला खाया भी जाता है। शालिग्राम भगवान की मूर्ति को आँवला के वृक्ष के नीचे रखकर पूजा करनी चाहिए और उसकी परिक्रमा करनी चाहिए।

हमारे पूर्वजों ने धर्म–आचरण को प्रधान बताकर बहुत–सी वस्तुओं का महत्व बढ़ा दिया है, जिसमें एक फल आँवला भी है। इसके विषय में एक कथा गरुड़ पुराण में वर्णित है। लक्ष्मी और पार्वती एक बार तीर्थाटन को गईं। राह में दोनों को भगवान की पूजा करने की इच्छा हुई। उस दिन माघ मास की एकादशी थी। पूजा का सामान पास न होने के कारण पूजा का समय व्यतीत होता देख दोनों के नेत्रों से जल गिरने लगा। उसी जलबिन्दु से आँवला फल की उत्पत्ति हुई। उसी फल को लेकर दोनों ने अपने इष्टदेव विष्णु और शिव की पूजा की और प्रसाद–रूप में उसी का भोजन किया। तब से आँवला–पूजन की रीति चल गयी।

आँवला बहुत ही लाभदायक फल है। इसको चाहे कच्चा खायें या पकाकर खायें, नमक या मीठा डालकर खायें, सब प्रकार से इसे खाया जा सकता है। यह अनेक कठिन रोगों को दूर करने की शक्ति रखता है। इसके फलों को सुखाकर पानी में भिगोकर आँख धोने से आँखों की ज्योति बढ़ती है। इससे बालों को धोने से बाल काले और लम्बे होते हैं। इसके वृक्ष की छाया में नित्य बैठने से चर्मरोग–दाद, खुजली, छाजन का विनाश हो जाता है। इसके फलों के रस का शरबत बनाकर पिया जाय, तो लाभदायक है। इसका मुरब्बा बनाकर खाने से गर्मी में शान्ति मिलती है, पित्त रोग तथा गर्मी के रोग शान्त होते हैं। इसका अवलेह शक्तिदायक होता है तथा इसे खाने से प्रदर आदि रोगों में लाभ होता है।

इस फल को हर परिवार में उचित रूप से बरतना चाहिए।

४८—गणेश जी–विनायक की कथा

ये पार्वती जी के पुत्र हैं जो शिव जी के आशीर्वाद से देवताओं में प्रथम पद के अधिकारी हुए। सब देवताओं से प्रथम गणेश जी की पूजा की जाती है। प्रत्येक कार्य के आरम्भ में इन्हीं का पूजन किया जाता है। इनके पूजन से कार्य निर्विघ्न संपूर्ण हो जाते हैं। इन्हें विनायक भी कहते हैं, जिनकी कथा निम्न प्रकार है :—

एक समय छोटे बालक का रूप रखकर चुटकी में चावल और दियाली में दूध लेकर गणेश जी खीर बना देने की याचना करते घर–घर घूमने लगे, पर सबने हँसी समझा, कोई खीर बनाने को राजी न हुआ। एक बुढ़िया ने कहा — ''बेटा तेरे लिए मैं खीर पका दूँगी।'' वह एक चिनगारी पर दियाली रखकर खीर पकाने लगी, तब इन्होंने कहा — ''बुढ़िया माँ, क्या बड़े टोकना में मेरी खीर पक सकेगी ? '' इस पर बुढ़िया क्रोध में आकर गाँव से बड़ा टोकना ले आयी। उसमें बुढ़िया ने ज्यों ही दूध डाला, बर्तन ऊपर तक भर गया। वह उसमें चुटकी के चावल डालकर खीर पकाने लगी। गणेश जी स्नान करने चल दिये। खीर बन जाने पर बुढ़िया उनको ढूँढ़ने चली। वह नदी के किनारे हरिभजन करते मिले।

बुढ़िया के जाने के बाद उसकी बहू ने एक थाली में खीर परोसकर सब देवी–देवताओं का नाम लेकर भोग लगाया और बड़े से बर्तन में खीर परोसकर रख दी, अपने बच्चों को खिलाई, फिर स्वयं बैठकर खाने लगी।

बुढ़िया ने जाकर गणेश जी से कहा — ''बेटा, खीर खाने चलो।'' गणेश जी ने कहा — ''तेरी बहू ने सब देवताओं का भोग लगाया जिससे मेरा पेट तो भर गया। तू जाकर और सबको खीर खिला दे।''

बुढ़िया घर आयी, बहू को खाते देख कहने लगी, ''तूने खीर जूठी कर दी।'' बहू ने कहा — ''एक पात्र भरकर उसके लिए मैं पहले ही रख चुकी हूँ, जब आयेगा तब खा लेगा।''

बुढ़िया ने गाँव भर के स्त्री–पुरुषों को बुला–बुलाकर खीर खिलाई, पर खीर चुकी ही नहीं; तब नदी–किनारे जाकर सब हाल गणेश जी से कहा।

वह कहने लगे — ''बूढ़ी माँ, तुम आँख बंद करके बैठ जाओ।'' बुढ़िया ने आँखें बन्द कर ली, गणेश देव ने खीर की महिमा समेट दी। थोड़ी देर में बुढ़िया ने आँख खोली, तो न वहाँ वह बालक था, न नदी का घाट।

झटपट वह घर पर आयी, तो देखा कि बर्तन सब धुले–मजे साफ रखे

हैं। इस आश्चर्य का हाल सारे गाँव में जा–जाकर उसने सबसे कहा।

सब लोग इस गणेश महिमा से बड़े उत्साहित हुए। तबसे गणेश देव की पूजा घर–घर में होने लगी।

विनायक जी कहानी :–

बाल गणेश विनायक चंगा, घर के द्वारे खड़ा निसंगा।
हाथ दियाली भरे दूध था, चुटकी चावल लिये हाथ था।
बुढ़िया माँ ने राँधी खीर, बाट जोहते हुई अधीर।
शंख घंटा बजा लगाया भोग, तृप्त आत्मा हुई ऐसा संजोग।
तृप्त हुए नारी पुरुष औ, बाल, बुढ़िया हुई देख के निहाल।
सब जन करते जै–जैकार, पूजने लगे कर नेम आचार।

विनायक जी की कहानी –

विनायक बाबा रंगा–चंगा, वृन्दावन में खड़ा सिरंगा।
काया दीजो, माया दीजो, भरा–पुरा परिवार दीजो।
बेटा चाहती को बेटा दीजो, पोता चाहती को पोता दीजो।
कंत चावला दीजो, पंथ मोखला दीजो।
पोत बहू राँधे रावड़ी, दुहीत बहू राँधे खीर।
खट्टी खाई राबड़ी, मीठी खाई खीर।

विभिन्न त्योहारों पर प्रयुक्त अलंकरण चित्र

नवरात्र देवी पूजा

नागपंचमी

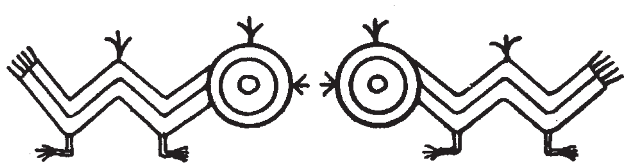

हल्दी से   कोयला घिसकर

श्रावण की हरियाली अमावस

बायें किवाड़ पर

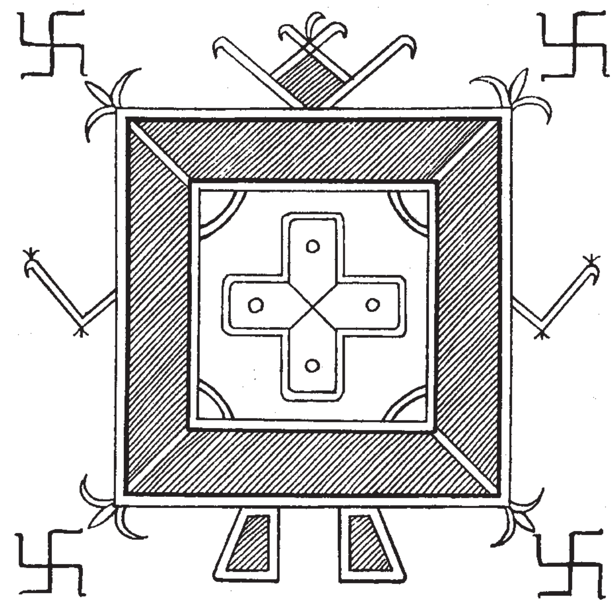

दायें किवाड़ पर

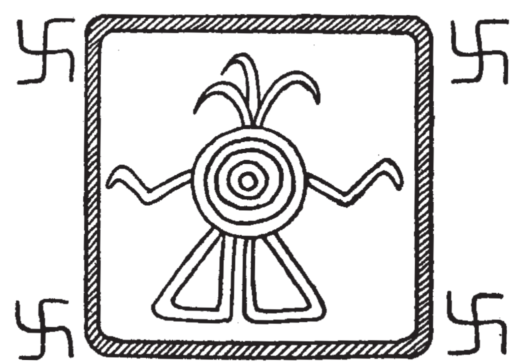

किवाड़ को धोकर गोबर–मिट्टी से लीपते हैं और गेरू से पोतकर मैदा में हल्दी मिलाकर उससे रखी जाती है।

रक्षाबंधन (सलोनो)

बायें किवाड़ पर

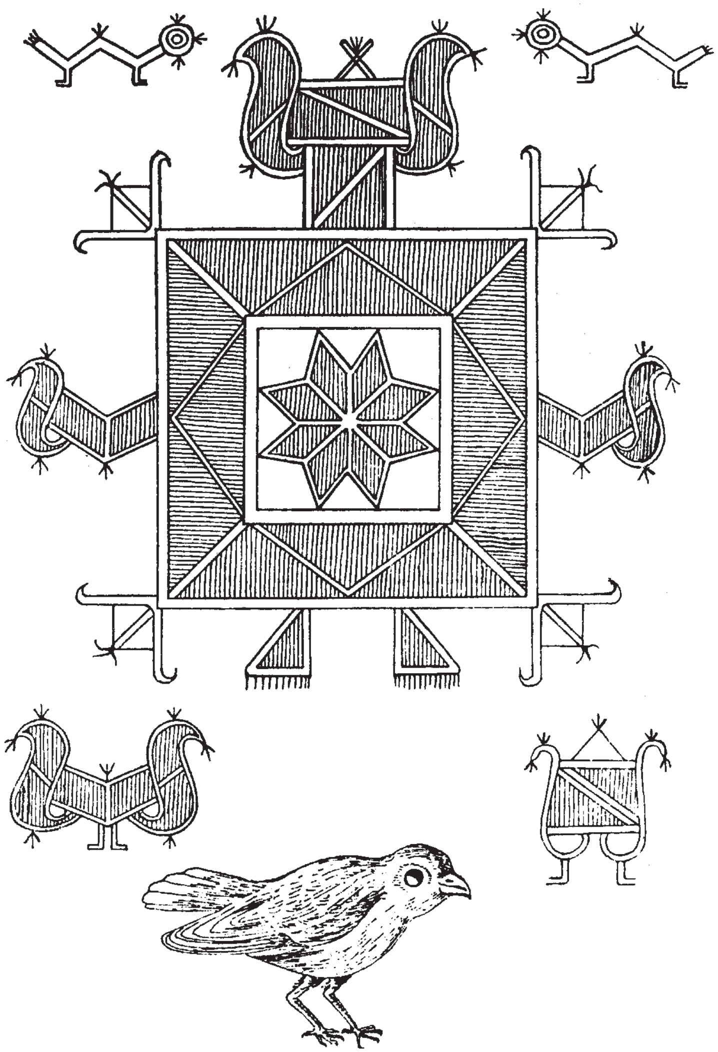

किवाड़ों का ऊपरी भाग गोबर–मिट्टी से लीपकर तथा खड़िया से पोतकर यह पेवरी से रखी जाती है तथा उसे पाँच रंगों से भरा जाता है।

रक्षाबंधन (सलोनो)

दायें किवाड़ पर

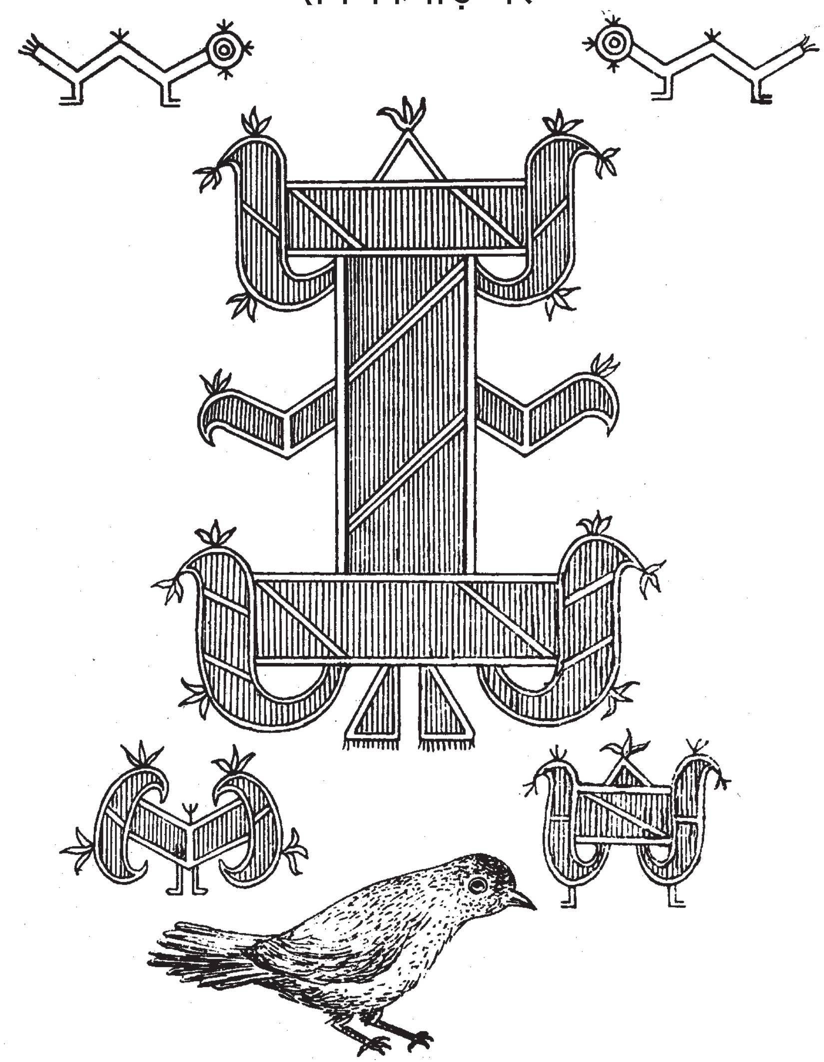

किवाड़ों का ऊपरी भाग गोबर–मिट्टी से लीपकर तथा खड़िया से पोतकर यह पेवरी से रखी जाती है तथा उसे पाँच रंगों से भरा जाता है।

जन्माष्टमी (जाँटी पूजा)

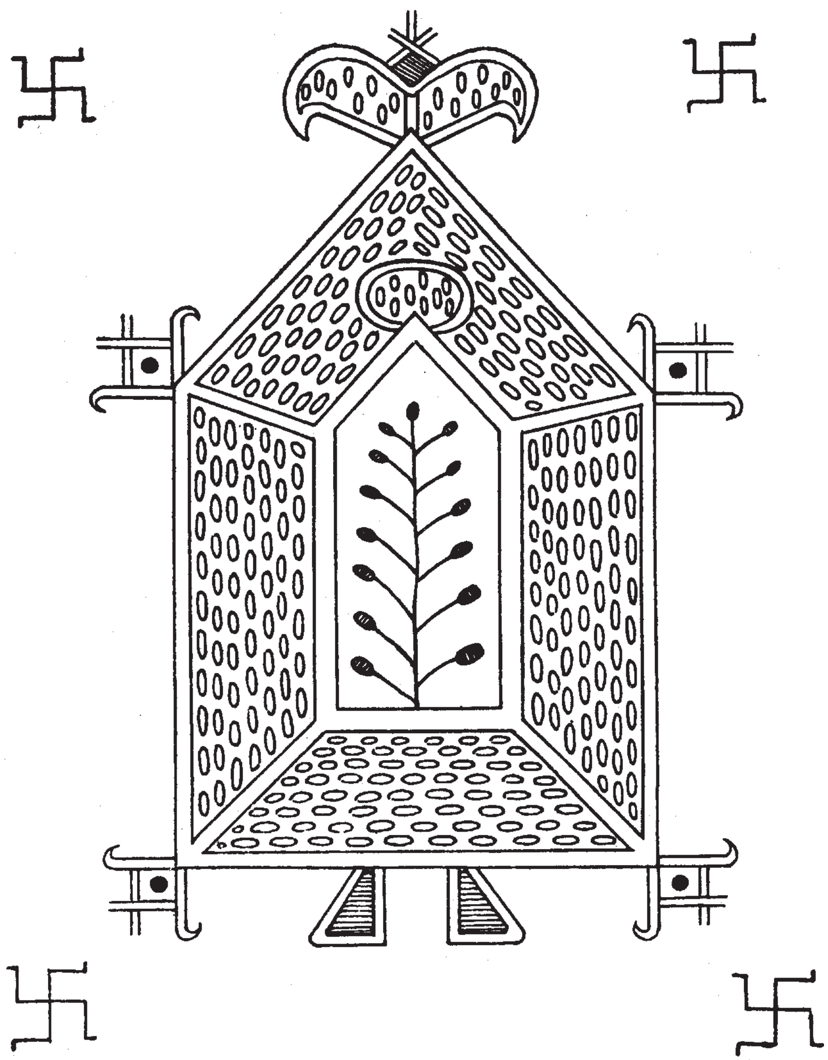

दीवार को धोकर या लीपकर गेरू से पोतते हैं, फिर हल्दी में मैदा मिलाकर उससे रखी जाती है।

अहोई अष्टमी

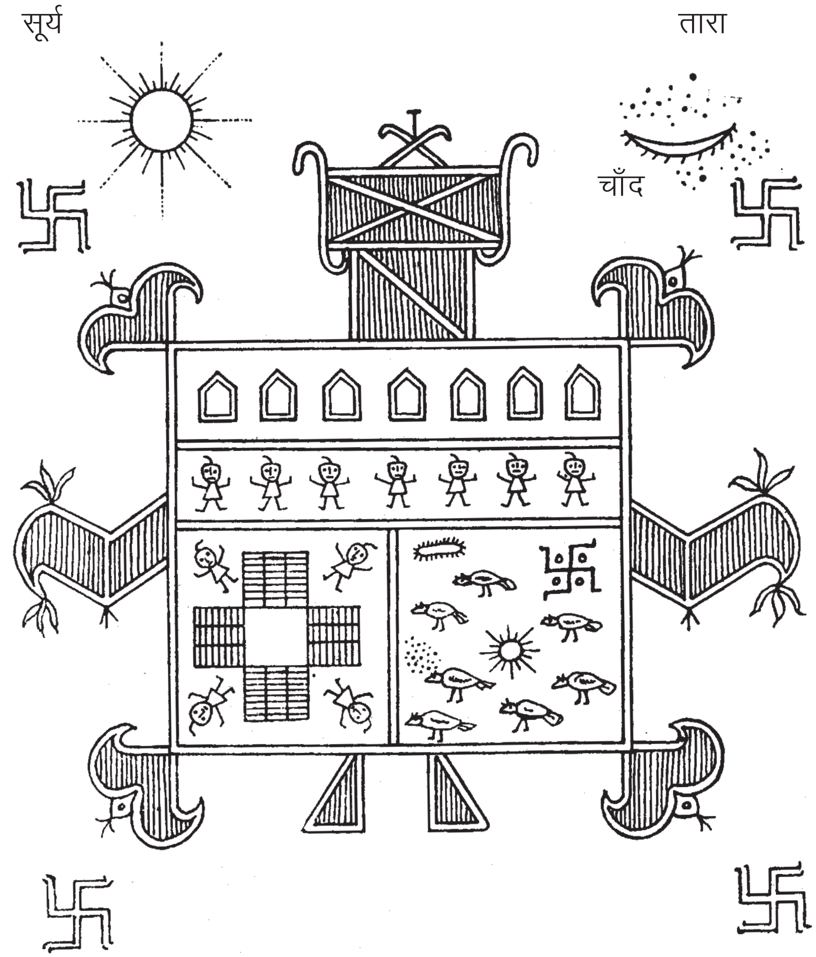

दीवार पर गेरू से खाका बनाकर पाँच रंगों से भरी जाती है।

दीपावली

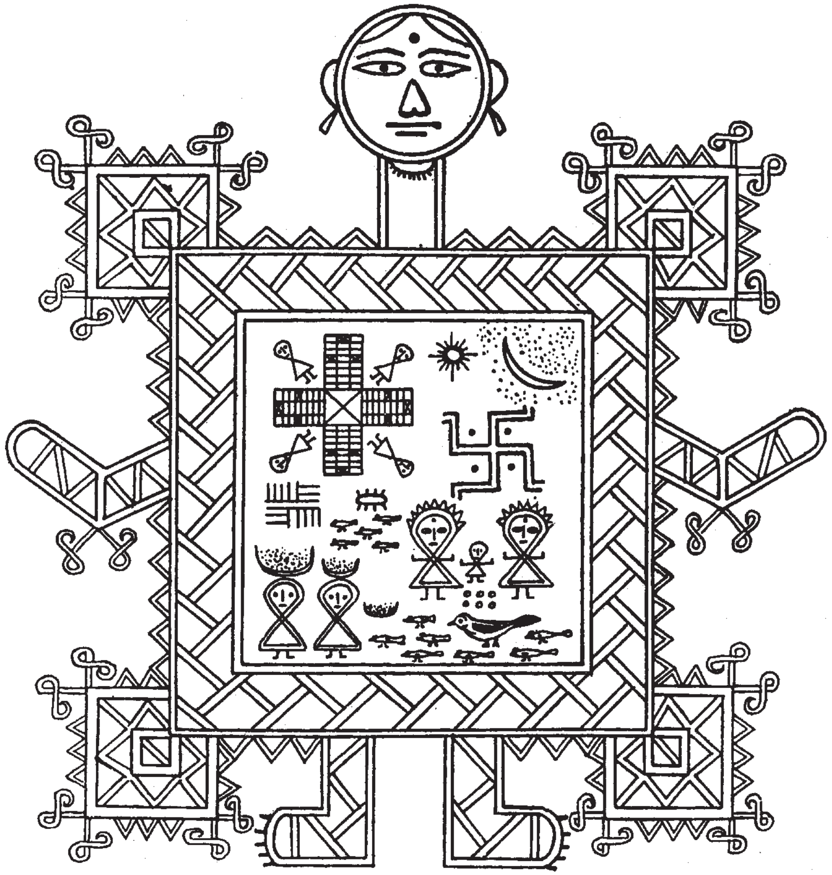

इस चित्र की लकीरें पीले रंग से खींचकर, भीतरी भाग लाल, हरा और काले रंग से बनाया जाय तथा बीच में जो कुछ बना है उसे लाल रंग से बनाया जाय।

देव उठनी एकादशी

इस दिन घर व आँगन में चौक रखे जाते हैं जो खड़िया और गेरू के घोल से धरती पर बनाये जाते हैं।

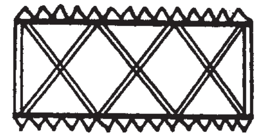

देहली पर

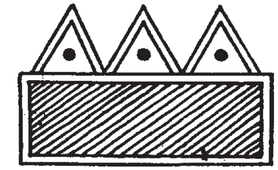

आँगन में पूजन की परात के नीचे

प्रत्येक कोठा—कोठरी में

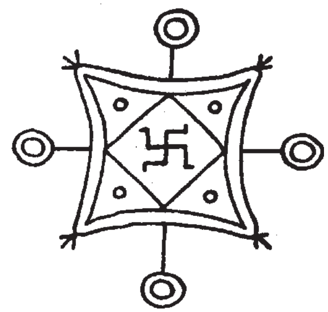

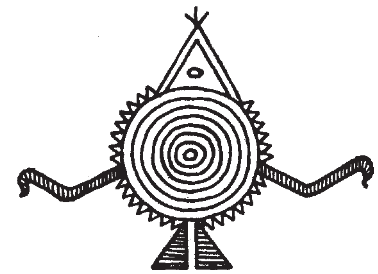

प्रत्येक कोठा—कोठरी में

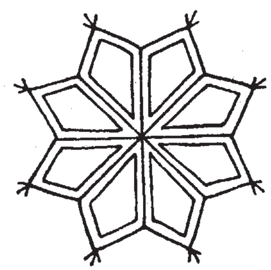

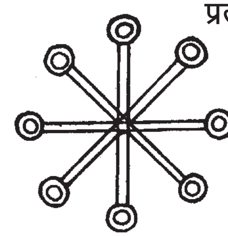

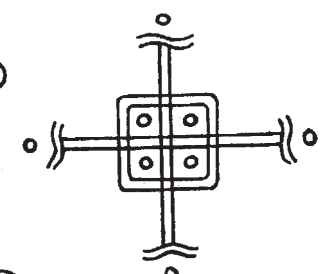

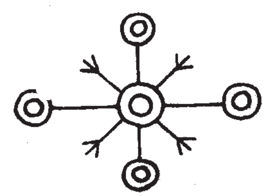

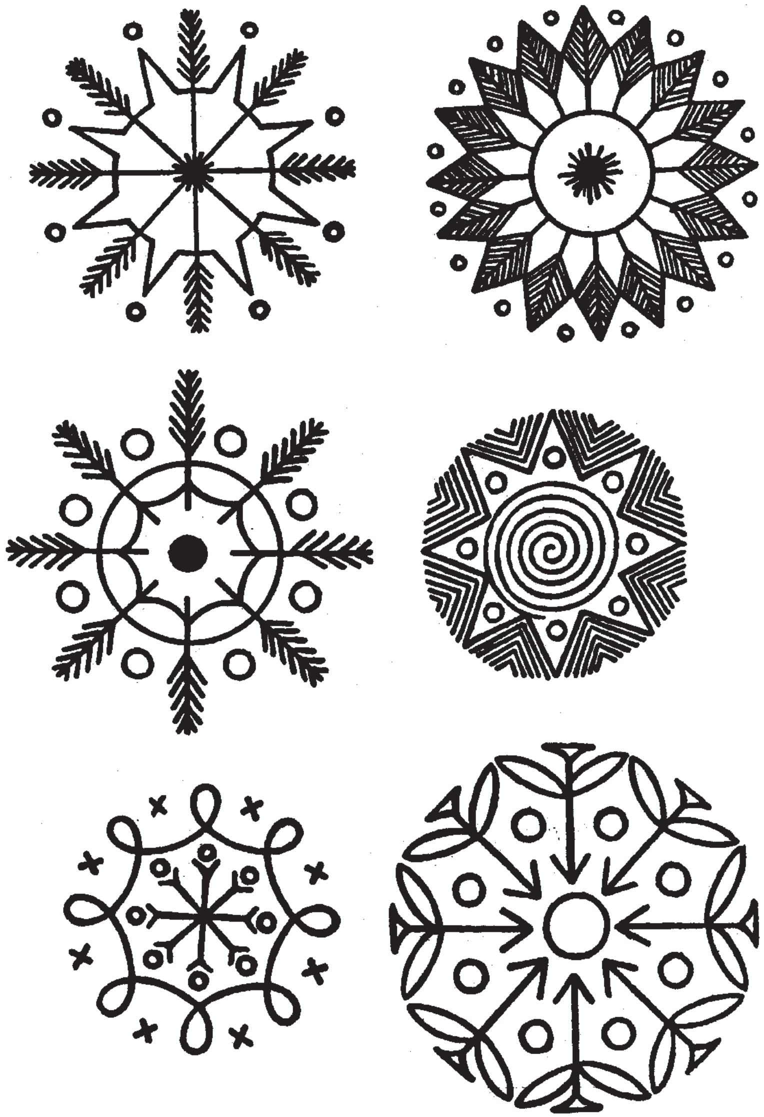

चौक के विभिन्न डिजाइन

देव उठनी एकादशी

इस दिन घर व आँगन में चौक रखे जाते हैं। दीवाली पूजन के स्थान पर मावस रखी जाती है।

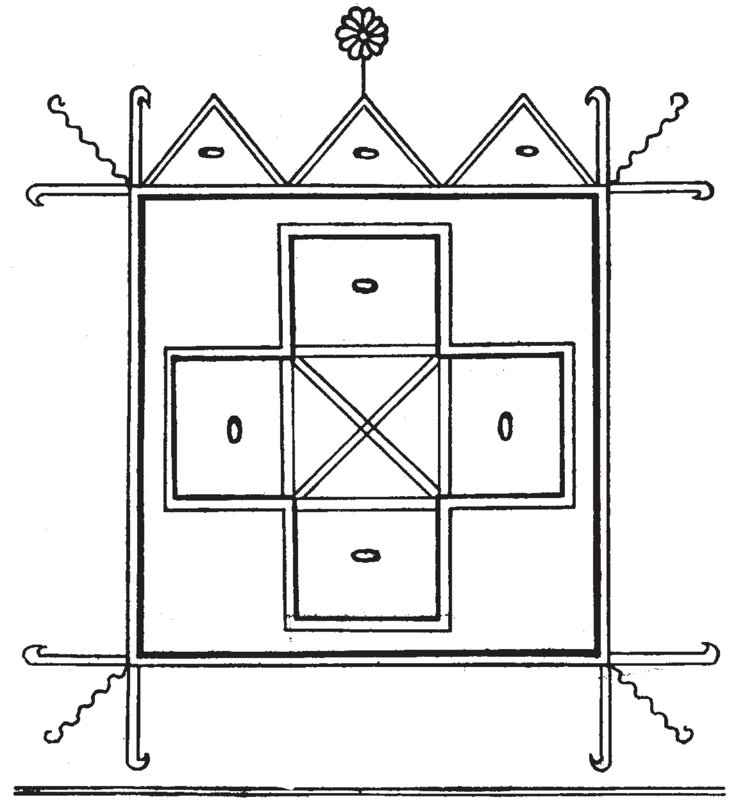

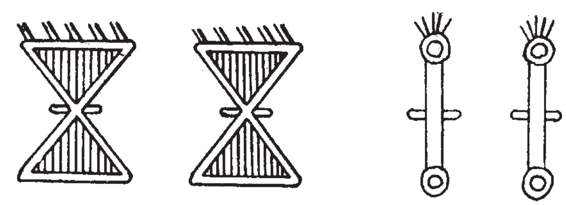

द्वार के बाहर की ओर

विवाह के अवसर पर कुछ अलंकरण चित्र

तेल ताई के दिन रतजगा

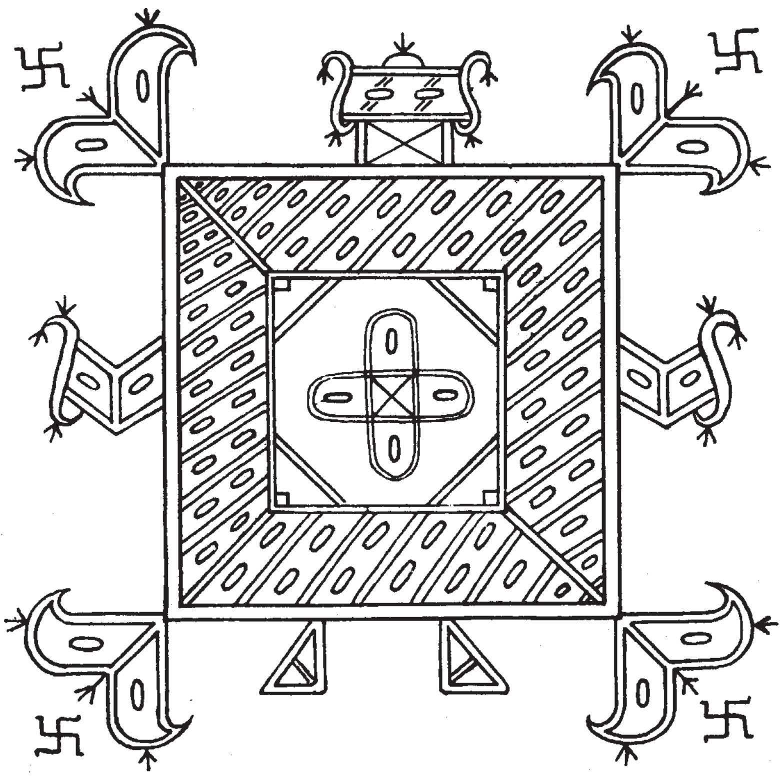

उस स्थान को धोकर गोबर–मिट्टी से लीपते हैं। गेरू से चौकोर पोतकर मैदा–हल्दी का पानी में बने घोल से इसे बनाते हैं।

बहू के आने पर रतजगा में

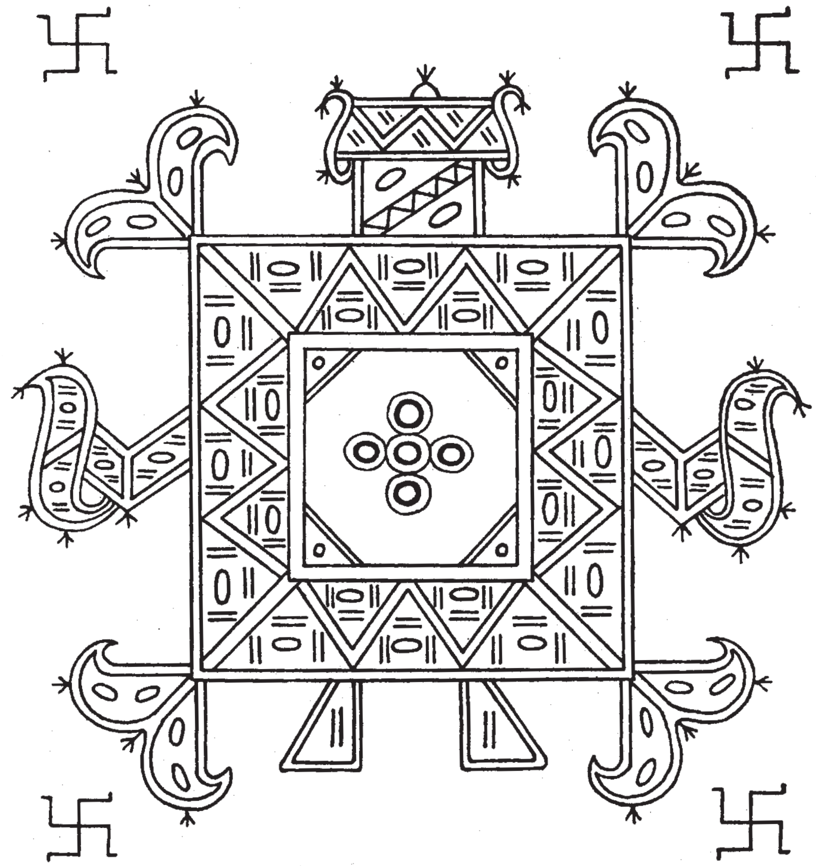

दीवार को धोकर या लीपकर गेरू से पोतते हैं फिर हल्दी में मैदा मिलाकर बने घोल से यह रखी जाती है।

लड़के की छठी के अवसर पर रतजगा

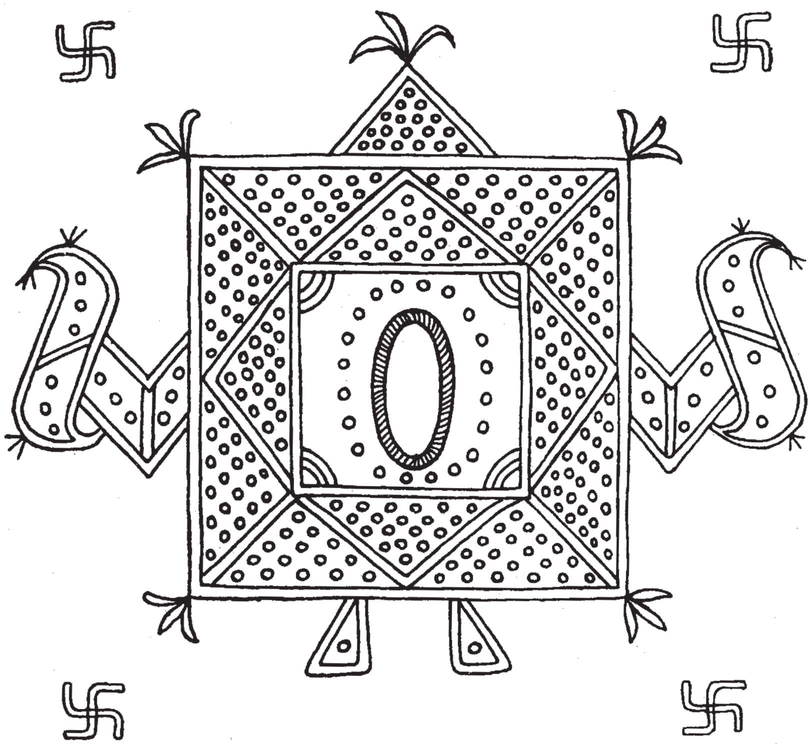

दीवार को धोकर गोबर–मिट्टी से लीपते हैं। गेरू से चौकोर पोतकर मैदा–हल्दी का पानी में घोल बनाकर उससे बनाते हैं।

जानने योग्य बातें

सप्तर्षि – कश्यप, भरद्वाज, गौतम, अत्रि, जमदग्नि, वशिष्ठ और विश्वामित्र।

सप्तनृत्तिका – हाथीशाला, घोड़शाला, दीमक, सर्प, गौ, संगम और राजद्वार की मिट्टी।

दसौषधि (दशमूल) – कूट, जटामासी, दोनों हल्दी, मुलहठी, शिलाजीत, चंदन, बच, चम्पक, नागरमोथा।

नौरत्न – माणिक, मोती, मूँगा, पन्ना, पुखराज, हीरा, इन्द्रनील, गोमेद, वैदूर्यमणि।

पंचगव्य – गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, घी को बराबर–बराबर मिलाकर बनता है। इसके पीने से अनेक पाप दूर हो जाते हैं।

सतनजा – जौ, गेहूँ, चावल, तिल, काकुन, सावाँ और उर्द।

नियम –

(१) यात्रा करते समय दूध पीकर न जायें।

(२) सदा सत्य बोलने का अभ्यास करें। जहाँ सच बोलने से अनर्थ होता हो, वहाँ चुप रहना उचित है।

(३) जितनी सामर्थ्य हो उतना खर्च करें, उधार न लें। यदि चुका देने की संभावना हो, तो शीघ्र ही चुका दें।

(४) श्राद्ध पर भोजन में अंगविहीन को न्योता न दें, अपने गोत्र वाले को भी श्राद्ध के न्योते में न खिलायें। दूसरे गोत्र वाले, नाती आदि भी खा सकते हैं।

(५) श्राद्ध के दिन तथा श्राद्ध का भोजन कर स्त्री–संग न करें, इससे संतान दुराचारी होती है।

(६) नीला रंग अशुद्ध माना गया है, इसलिए इस रंग के वस्त्र न पहनें। विवाह एवं मृतक संस्कार में नीला रंग वर्जित है।

(७) विधवा को नीला वस्त्र कभी न पहनना चाहिए, इससे पति को नरक में रहना पड़ता है।

(८) मृतक के दाहकर्म में नीम की लकड़ी का प्रयोग न होना चाहिए। इसके प्रयोग से प्रेतयोनि मिलती है।

(९) शुभ संवाद के पत्र लाल स्याही से लिखना चाहिए।